بِسۡمِ اللّٰہِ الرَّحۡمٰنِ الرَّحِیۡمِ نَحۡمَدُہٗ وَنُصَلِّیۡ عَلٰی رَسُوۡلِہِ الۡکَرِیۡمِ وَعَلٰی عَبۡدِہِ الۡمَسِیۡحِ الۡمَوۡعُوۡد

وَلَقَدۡ نَصَرَکُمُ اللّٰہُ بِبَدۡرٍ وَّاَنۡتُمۡ اَذِلَّۃٌ

साप्ताहिक क़ादियान

बदर

Weekly BADAR Qadian HINDI

संपादक
शेख मुजाहिदअहमद

उप संपादक
सय्यद मुहियुद्दीन फ़रीद

वर्ष- 11
अंक -21

Postal Reg. No.GDP -45/2026-2028

03 जुल् हज्जा 1447 हिज्री कमरी, 21 -हिजरत 1405 हिज्री शम्सी, 21 मई 2026 ई.

अल्लाह तआला का आदेश

یٰۤاَیُّهَا الَّذِیۡنَ اٰمَنُوۡۤا اِذَا تَدَایَنۡتُمۡ بِدَیۡنٍ اِلٰۤی اَجَلٍ مُّسَمًّی فَاکۡتُبُوۡهُ ؕ وَلۡیَکۡتُبۡ بَّیۡنَکُمۡ کَاتِبٌۢ بِالۡعَدۡلِ ۪ وَلَا یَاۡبَ کَاتِبٌ اَنۡ یَّکۡتُبَ کَمَا عَلَّمَهُ اللّٰهُ فَلۡیَکۡتُبۡ ۚ وَلۡیُمۡلِلِ الَّذِیۡ عَلَیۡهِ الۡحَقُّ وَلۡیَتَّقِ اللّٰهَ رَبَّهٗ وَلَا یَبۡخَسۡ مِنۡهُ شَیۡئًا ؕ فَاِنۡ کَانَ الَّذِیۡ عَلَیۡهِ الۡحَقُّ سَفِیۡهًا اَوۡ ضَعِیۡفًا اَوۡ لَا یَسۡتَطِیۡعُ اَنۡ یُّمِلَّ هُوَ فَلۡیُمۡلِلۡ وَلِیُّهٗ بِالۡعَدۡلِ ؕ وَاسۡتَشۡهِدُوۡا شَهِیۡدَیۡنِ مِنۡ رِّجَالِکُمۡ ۚ فَاِنۡ لَّمۡ یَکُوۡنَا رَجُلَیۡنِ فَرَجُلٌ وَّامۡرَاَتٰنِ مِمَّنۡ تَرۡضَوۡنَ مِنَ الشُّهَدَآءِ اَنۡ تَضِلَّ اِحۡدٰىهُمَا فَتُذَکِّرَ اِحۡدٰىهُمَا الۡاُخۡرٰی ؕ وَلَا یَاۡبَ الشُّهَدَآءُ اِذَا مَا دُعُوۡا ؕ وَلَا تَسۡـَٔمُوۡۤا اَنۡ تَکۡتُبُوۡهُ صَغِیۡرًا اَوۡ کَبِیۡرًا اِلٰۤی اَجَلِهٖ ؕ ذٰلِکُمۡ اَقۡسَطُ عِنۡدَ اللّٰهِ وَاَقۡوَمُ لِلشَّهَادَةِ وَاَدۡنٰۤی اَلَّا تَرۡتَابُوۡۤا اِلَّاۤ اَنۡ تَکُوۡنَ تِجَارَةً حَاضِرَةً تُدِیۡرُوۡنَهَا بَیۡنَکُمۡ فَلَیۡسَ عَلَیۡکُمۡ جُنَاحٌ اَلَّا تَکۡتُبُوۡهَا ؕ وَاَشۡهِدُوۡۤا اِذَا تَبَایَعۡتُمۡ ۪ وَلَا یُضَآرَّ کَاتِبٌ وَّلَا شَهِیۡدٌ ؕ وَاِنۡ تَفۡعَلُوۡا فَاِنَّهٗ فُسُوۡقٌۢ بِکُمۡ ؕ وَاتَّقُوا اللّٰهَ ؕ وَیُعَلِّمُکُمُ اللّٰهُ ؕ وَاللّٰهُ بِکُلِّ شَیۡءٍ عَلِیۡمٌ ﴿۲۸۳﴾

(سورۃ البقرہ آیت: 283)

अनुवाद: ऐ ईमान लाने वालो! जब तुम किसी निश्चित अवधि तक के लिए आपस में ऋण का लेन-देन करो तो उसे लिख लिया करो। और चाहिए कि तुम्हारे बीच लिखने वाला न्याय के साथ लिखे। और कोई लिखने वाला इस बात से इंकार न करे कि वह लिखे। अतः उसे वैसा ही लिखना चाहिए जैसा खुदा तआला ने उसे सिखाया है। और वह व्यक्ति लिखवाए जिसके जिम्मे दूसरे का अधिकार है, और वह अल्लाह, अपने रब्ब का तक़वा अपनाए और उसमें से कुछ भी कम न करे। फिर यदि वह व्यक्ति जिसके जिम्मे दूसरे का अधिकार है नासमझ हो, या कमजोर हो, या स्वयं लिखवाने की शक्ति न रखता हो, तो उसका अभिभावक न्याय के साथ उसकी ओर से लिखवाए। और अपने पुरुषों में से दो व्यक्तियों को गवाह बना लिया करो। और यदि दो पुरुष उपलब्ध न हों तो एक पुरुष और दो स्त्रियाँ उन गवाहों में से हों जिन पर तुम संतुष्ट हो। यह इसलिए है कि यदि उन दोनों स्त्रियों में से एक भूल जाए तो दूसरी उसे याद दिला दे। और जब गवाहों को बुलाया जाए तो वे इंकार न करें। और लेन-देन छोटा हो या बड़ा, उसे उसकी निश्चित अवधि तक लिखने से ऊबो नहीं। तुम्हारा यह तरीका खुदा तआला के निकट अधिक न्यायपूर्ण है, और गवाही को स्थापित करने के लिए अधिक मजबूत उपाय है, तथा इस बात के अधिक निकट है कि तुम संदेह में न पड़ो। हाँ, यदि वह हाथों-हाथ होने वाला व्यापार हो जिसे तुम उसी समय आपस में ले-दे लेते हो, तो इस स्थिति में तुम पर कोई दोष नहीं कि उसे न लिखो। और जब तुम कोई खरीद-फरोख्त करो तो गवाह बना लिया करो। और न लिखने वाले को और न गवाह को किसी प्रकार की कोई हानि पहुँचाई जाए। यदि तुम ऐसा करोगे तो निश्चय ही यह तुम्हारे लिए बड़े गुनाह की बात होगी। और अल्लाह से डरते रहो जबकि अल्लाह ही तुम्हें शिक्षा देता है। और अल्लाह हर चीज़ का पूरा ज्ञान रखता है।

समझौतों की पाबंदी और आँहज़रत सल्लल्लाहो अलैहि व सल्लम का बेजोड़ उदाहरण

عَنۡ اَبِیۡ هُرَیۡرَةَ رَضِیَ اللّٰهُ عَنۡهُ اَنَّ رَجُلًا اَتَی النَّبِیَّ صَلَّی اللّٰهُ عَلَیۡهِ وَسَلَّمَ یَتَقَاضَاهُ فَاَغۡلَظَ لَهٗ. فَهَمَّ بِهٖ اَصۡحَابُهٗ فَقَالَ رَسُوۡلُ اللّٰهِ صَلَّی اللّٰهُ عَلَیۡهِ وَسَلَّمَ دَعُوۡهُ فَاِنَّ لِصَاحِبِ الۡحَقِّ مَقَالًا. ثُمَّ قَالَ: اَعۡطُوۡهُ سِنًّا مِثۡلَ سِنِّهٖ. قَالُوۡا: یَا رَسُوۡلَ اللّٰهِ لَا نَجِدُ اِلَّاۤ اَمۡثَلَ مِنۡ سِنِّهٖ. قَالَ: اَعۡطُوۡهُ فَاِنَّ خَیۡرَکُمۡ اَحۡسَنُکُمۡ قَضَاءً. (مسلم کتاب البیوع باب من استسلف شیئًا فقضی خیرًا منه)

हज़रत अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हो बयान करते हैं कि एक व्यक्ति आँहज़रत सल्लल्लाहो अलैहि व सल्लम की सेवा में उपस्थित हुआ। उसने हुज़ूर सल्लल्लाहो अलैहि व सल्लम से अपना ऋण वापस करने की मांग की और बहुत असभ्यता से व्यवहार किया। हुज़ूर सल्लल्लाहो अलैहि व सल्लम के सहाबा रज़ियल्लाहु अन्हुम को बहुत क्रोध आया और वे उसे डाँटने लगे। हुज़ूर सल्लल्लाहो अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया, उसे कुछ न कहो, क्योंकि जिसका कुछ लेना हो उसे कुछ कहने का भी अधिकार होता है। फिर हुज़ूर सल्लल्लाहो अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया, उसे उसी उम्र का जानवर दे दो जितनी उम्र का जानवर उसे लेना है। सहाबा रज़ियल्लाहु अन्हुम ने अर्ज़ किया कि इस समय तो उससे अधिक उम्र का जानवर मौजूद है। हुज़ूर सल्लल्लाहो अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया, वही दे दो, क्योंकि तुममें से सबसे अच्छा वह है जो अपना ऋण अधिक उत्तम और अच्छी तरह अदा करता है।

(बिहवाला हदीक़तुस्सालिहीन, हदीस नम्बर 832 व 835)

मनुष्य को चाहिए कि अपने आजीविका के तरीकों में पहले से ही मितव्ययिता को ध्यान में रखे ताकि सूद पर ऋण लेने की नौबत न आए

हज़रत अकदस मसीह मौऊद अलैहिस्सलाम का उपदेश

जो व्यक्ति खुदा तआला पर भरोसा करता है, खुदा तआला उसके लिए अदृश्य रूप से कोई न कोई साधन पैदा कर देता है। अफसोस कि लोग इस रहस्य को नहीं समझते कि धर्मपरायण व्यक्ति के लिए खुदा तआला कभी ऐसी परिस्थिति उत्पन्न नहीं करता कि वह सूद पर ऋण लेने के लिए विवश हो जाए। याद रखो, जैसे अन्य गुनाह हैं, उदाहरण के लिए व्यभिचार और चोरी, वैसे ही सूद देना और लेना भी गुनाह है। यह कितनी हानिकारक बात है कि धन भी गया, प्रतिष्ठा भी गई और ईमान भी चला गया। सामान्य जीवन में ऐसा कोई कार्य नहीं है जिस पर इतना खर्च हो कि मनुष्य सूद पर ऋण लेने के लिए मजबूर हो जाए। उदाहरण के लिए विवाह है। उसमें कोई अधिक खर्च नहीं। दोनों पक्षों

शेष 8 पर

तफ़सीर-ए-कबीर से अंश

आपस के संबंध खराब न करो। ऋण देते या लेते समय क़ुरआन की शिक्षाओं को ध्यान में रखो।

हज़रत मुस्लेह मौऊद रज़ियल्लाहु अन्हु सूरह अल-बक़रा की आयत नंबर 283 की तफ़सीर करते हुए फ़रमाते हैं:

ऊपर की आयतों में क़ौमी तबाही का एक बहुत बड़ा कारण अल्लाह तआला ने सूद बताया था। अब क़ौमी गिरावट का दूसरा कारण यह बताया गया है कि लेन-देन के मामलों में सावधानी नहीं बरती जाती। क़र्ज़ देते समय दोस्ती और मोहब्बत के कारण न तो उसकी वापसी की कोई निश्चित अवधि तय कराई जाती है और न ही उसे लिखित रूप में लाया जाता है। और जब पैसा वापस आता हुआ दिखाई नहीं देता तो लड़ाई-झगड़ा शुरू हो जाता है, यहाँ तक कि मुक़दमों तक बात पहुँच जाती है और सारी दोस्ती दुश्मनी में बदल जाती है।

अल्लाह तआला फ़रमाता है कि आपसी संबंधों को खराब मत करो और क़र्ज़ देते या लेते समय हमारी इन दो हिदायतों को सामने रखो। पहली यह कि जब तुम किसी से क़र्ज़ लो तो उसकी अदायगी का समय तय कर लो। दूसरी यह कि धन का लेन-देन लिखित रूप में कर लो। इस शर्त का एक बड़ा फ़ायदा यह है कि इस तरह क़र्ज़ लेने वाले को यह एहसास

शेष 8 पर

अख़बार-ए-अहमदिया

रूहानी ख़लीफ़ा इमाम जमाअत अहमदिया हज़रत मिर्ज़ा मसरूर अहमद साहिब ख़लीफ़तुल मसीह ख़ामिस अय्यदहुल्लाह तआला बिनस्रिहिल अज़ीज सकुशल हैं। अलहम्दो लिल्लाह। अल्लाह तआला हुज़ूर को सेहत तथा सलामती से रखे तथा प्रत्येक क्षण आप पर अपना फ़जल नाज़िल करता रहे। आमीन

जमील अहमद नासिर प्रिंटर एवं पब्लिशर ने फ़ज़्ल-ए-उमर प्रिंटिंग प्रेस क़ादियान में छपवा कर दफ़्तर अख़बार बदर से प्रकाशित किया। प्रौपराइटर - निगरान बदर बोर्ड क़ादियान

हज़रत ख़लीफ़तुल मसीह ख़ामिस अय्यदहुल्लाहु तआला बिनस्रिहिल अज़ीज़ के खुतबे से

हमारी सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन का एक महत्वपूर्ण हिस्सा आपसी लेन-देन का मामला है। इंसान को अपनी ज़रूरतें पूरी करने के लिए एक-दूसरे की मदद की आवश्यकता पड़ती रहती है। लेकिन यही लेन-देन जब कर्ज़ की शक्ल में हो तो अत्यधिक सामाजिक समस्याएँ पैदा कर देता है। भाइयों के बीच आपसी रंजिशें हो जाती हैं, दोस्तों के बीच झगड़े हो जाते हैं और जब बड़े पैमाने पर कारोबारी संस्थानों और बैंकों से कर्ज़ लिया जाता है तो कई बार सब कुछ लुटने और अपमान व बदनामी तक नौबत पहुँच जाती है।

तो एक मोमिन को, ऐसे व्यक्ति को जो खुदा तआला का बंदा कहलाने का दावा करता है, अल्लाह तआला ने समाज की इस बुराई से बचने का आदेश दिया है। और फिर तरीका भी बताया है कि किस प्रकार झगड़ों और अपमान व बदनामी की बातों से बचा जा सकता है। इस्लाम ने कर्ज़ देने वालों को भी बता दिया है कि कर्ज़ देने के बाद उसे वापस लेने का तरीका क्या होना चाहिए और लेने वालों को भी बता दिया है कि उन्होंने किस तरह अच्छे तरीके से अदायगी पर ध्यान देते हुए समाज में अपना स्थान बनाना या ऊँचा करना है। क़ुरआन-ए-करीम ने इतनी गहराई में जाकर, मानव मनोविज्ञान को ध्यान में रखते हुए कर्ज़ के रूप में होने वाले लेन-देन का हिसाब रखने का तरीका सिखाया है कि यदि नीयत अच्छी हो तो इस बात का प्रश्न ही नहीं रहता कि दोनों पक्षों को किसी प्रकार की परेशानी का सामना करना पड़े।

अल्लाह तआला फ़रमाता है: {يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اِذَا تَدَايَنْتُمْ بِدَيْنٍ اِلٰٓى اَجَلٍ مُّسَمًّى فَاكْتُبُوْهُ}

अर्थात हे ईमान वालो! जब तुम किसी निश्चित अवधि के लिए कर्ज़ का लेन-देन करो तो उसे लिख लिया करो। देखिए यह कितना सुंदर आदेश है। कुछ लोग कह देते हैं कि हमें बड़ा भरोसा है, लिखने की क्या ज़रूरत है, हम तो भाई-भाई की तरह हैं। वे समझते हैं कि लिखने का मतलब अविश्वास है, जिससे दूरी पैदा होगी और रंजिशें बढ़ेंगी तथा आपसी संबंध खराब होंगे। तो याद रखो कि यदि संबंध खराब होते हैं, तो वह क़ुरआन-ए-करीम के आदेश पर अमल न करने से होंगे, न कि उस पर अमल करने से।

कभी-कभी लोग यह भी लिखते या कहते हैं कि यह छोटी रकम है, इसे क्या लिखना, हमें शर्म आती है कि इतनी छोटी रकम के बारे में लिखें, जबकि इतना नज़दीकी संबंध है। या फिर कोई चीज़ उपयोग के लिए ली हो, उसके बारे में भी लिखना पड़े। उदाहरण के तौर पर शादी-ब्याह आदि में भी एक-दूसरे की चीज़ें उपयोग के लिए ली जाती हैं, तो वे भी इसी श्रेणी में आती हैं। उन्हें भी लिख लेना चाहिए क्योंकि उनमें भी कई बार बदगुमानी पैदा हो जाती है। बाद की बदगुमानी से बचने का सबसे अच्छा तरीका यही है कि छोटी सी लिखित दस्तावेज़ बना ली जाए।

अल्लाह तआला का आदेश तो यह है कि लेन-देन चाहे छोटा हो या बड़ा, झगड़ों से बचने के लिए उसे लिखो। जैसा कि फ़रमाया: {وَلَا تَسْـَٔمُوْٓا اَنْ تَكْتُبُوْهُ صَغِيْرًا اَوْ كَبِيْرًا اِلٰٓى اَجَلِهٖ}

अर्थात लेन-देन चाहे छोटा हो या बड़ा, उसे उसकी निर्धारित अवधि तक लिखो, और अनुबंध की पूरी विवरण भी लिखो, और इससे ऊबना नहीं चाहिए और इसे मामूली बात नहीं समझना चाहिए। क्योंकि ऊबने का अर्थ यह है कि शैतान कभी भी तुम्हारे अंदर बदगुमानी पैदा कर सकता है, और जो तुम बाहरी तौर पर ऊँचे हौसले का प्रदर्शन कर रहे हो, वह एक समय ऐसा ला सकता है कि ऊँचे हौसले की बात तो दूर, तुम निम्न स्तर के नैतिकता का भी प्रदर्शन नहीं कर रहे होगे। और ऐसा आम तौर पर होता है। यह केवल कल्पनात्मक बातें नहीं हैं, बल्कि ऐसे मामले सामने आते हैं, और कई स्थानों पर ऐसे लेन-देन के मामलों में लोगों के मुकदमे अदालतों में, सार्वजनिक मामलों में, जमाअत में या देश की अदालतों में चलते हैं और चलते रहते हैं। जो लोग एक समय में एक-दूसरे के बहुत करीबी होते हैं, साथ बैठते, खाते-पीते और गहरी दोस्ती रखते हैं, वही एक-दूसरे के जानी दुश्मन बन जाते हैं। और एक-दूसरे के खिलाफ अदालतों में झूठी गवाही तक खोजनी पड़ती है। यह सब अल्लाह तआला के आदेशों पर अमल न करने का परिणाम है।

फिर अल्लाह तआला ने, जो अपनी मख़लूक के मनोविज्ञान को जानता है कि किस प्रकार के दिमाग होते हैं, ऐसे लेन-देन की लिखित दस्तावेज़ तैयार करने का तरीका भी बता दिया कि कैसे लिखी जाए और कौन लिखवाए। तो लिखवाने की जिम्मेदारी कर्ज़ लेने वाले पर डाल दी गई है, जैसा कि फ़रमाया: {وَلْيُمْلِلِ الَّذِيْ عَلَيْهِ الْحَقُّ وَلْيَتَّقِ اللّٰهَ رَبَّهٗ وَلَا يَبْخَسْ مِنْهُ شَيْـًٔا}

अर्थात वह लिखवाए जिस पर दूसरे का हक़ है, और लिखवाने वाला अल्लाह से, अपने रब से डरता रहे और उसमें से कुछ भी कम न करे। यानी कर्ज़ लेने वाला स्वयं लिखवाए। इसकी वजह यह है कि जिस पर कर्ज़ है वह स्वयं स्पष्ट करे कि उसने कितना कर्ज़ लिया है, और उसकी रसीद में वापसी की शर्तें भी उसी प्रकार लिखी जाएँ जैसी कर्ज़ लेने वाले ने तय की हैं। उदाहरण के तौर पर यदि किस्तों में वापसी है तो लिखा जाए कि इतनी किस्तें हैं, और यदि अवधि निश्चित है तो लिखा जाए कि इतना समय है, आदि। ताकि कर्ज़ लेने वाला यह न कह सके कि उस पर अत्याचार हुआ है या धोखे से शर्तें बदलकर लिख दी गई हैं। इसलिए कहा गया कि कर्ज़ लेने वाला स्वयं शब्द तय करे।

और यह बात केवल तुम्हें इस्लामी समाज में ही देखने को मिलेगी, इस्लाम की शिक्षा में ही मिलती है कि कर्ज़ देने वाले को भी सवाब का हक़दार बताया गया है, कि यदि वह कर्ज़ देते समय सहूलियत वाली शर्तें स्वीकार कर ले तो उसे सवाब मिलता है। आज दुनिया में आम तौर पर कर्ज़ देने वाला अपनी शर्तें थोपता है, जबकि इस्लाम में कर्ज़ लेने वाला अपनी शर्तों पर कर्ज़ लेता है, और कर्ज़ देने वाले को आदेश है कि तुम शर्तें स्वीकार कर लो, तुम्हें बड़ा सवाब मिलेगा।

फिर यह भी कि जब कर्ज़ लेने वाला अपनी शर्तों पर कर्ज़ ले लेता है तो वह उनका पालन करने का भी पाबंद हो जाता है। उसे फिर यह शिकायत नहीं रहती और न होनी चाहिए कि उस पर ज़ुल्म हुआ है। और फिर कर्ज़ देने वाले के खिलाफ किसी प्रकार की शिकायत भी नहीं रहती। यह इस्लामी समाज की खूबसूरती है कि जरूरतमंदों की जरूरतें पूरी करने के लिए आपसी व्यवस्था पैदा की गई है।

फिर यह भी कि यदि दोनों में से कोई लिखना न जानता हो तो अपने परिचितों, रिश्तेदारों या प्रियजनों में से किसी ऐसे व्यक्ति को ढूँढ लिया जाए जो लिखना जानता हो, और उससे लिखवाया जाए। और लिखने वाले को भी इतना महत्व दिया गया है कि उसे भी आदेश दिया गया कि न्याय के साथ लिखे, और रिश्तेदारी या संबंध उसे किसी पक्ष की अनुचित सहायता पर न उकसाएँ। और यह भी कि अल्लाह ने तुम्हें जो ज्ञान दिया है, यानी लिखना सिखाया है, तो जब भी लिखवाने का मामला आए तो मना न करो। इस तरह पूरे समाज को जोड़ा गया है।

फिर यह भी कि यदि कर्ज़ लेने वाला अशिक्षित हो या कमज़ोर बुद्धि का हो, तो उसकी कमज़ोरी का लाभ उठाकर कोई नुकसान न पहुँचाया जाए। इसलिए उसका कोई रिश्तेदार या संरक्षक उसकी ओर से लिखवाए।

और कभी-कभी नाबालिगों की संपत्ति होती है, और उनसे भी लोग कर्ज़ ले लेते हैं। या किसी को थोड़ी रकम देकर उसकी मजबूरी का फायदा उठाकर कई गुना सूद या लाभ लेकर उसे दबा दिया जाता है—इससे भी बचाना आवश्यक है।

फिर इतनी सावधानी रखी गई कि आगे चलकर बदगुमानी और झगड़े पैदा हो सकते हैं, इसलिए आदेश दिया गया कि जब यह दस्तावेज़ पूरा हो जाए तो उस पर गवाहों की गवाही भी कराई जाए: {وَاسْتَشْهِدُوْا شَهِيْدَيْنِ مِنْ رِّجَالِكُمْ}

अर्थात अपने पुरुषों में से दो को गवाह बनाओ। और आगे कहा गया कि यदि दो पुरुष न हों तो एक पुरुष और दो महिलाएँ। दो महिलाओं की शर्त इसलिए रखी गई कि यदि एक भूल जाए तो दूसरी उसे याद दिला दे। इस प्रकार यह भी स्पष्ट हो गया कि दो महिलाओं की गवाही एक पुरुष के बराबर है।

तो देखिए कितनी ताकीद के साथ पूरा तरीका बता दिया गया है। और इसी आयत में दो बार यह भी कहा गया कि यदि तुम इस तरीके पर अमल नहीं करते तो तक़वा से दूर हो जाओगे। यह आदेश लिखने वाले, गवाहों और दोनों पक्षों सभी को दिया गया है। और अंत में यह भी कहा गया कि तुम धोखा दे सकते हो, अधिकार दबा सकते हो या सही तरीके से काम नहीं कर सकते, और गवाहों पर दबाव डालकर अपनी बात मनवा सकते हो, जैसा कि आजकल होता है, लेकिन याद रखो कि लोगों को धोखा दिया जा सकता है, अल्लाह तआला को नहीं। वह हर चीज़ का जानने वाला है। उसे पता है कि असल लेन-देन किन शर्तों पर हुआ था। यदि तुम दस्तावेज़ में बदलाव करोगे या गवाहों पर दबाव डालोगे तो तुम्हें इसकी सज़ा जरूर मिलेगी, क्योंकि यह भी गुनाह है।

हमारा सामाजिक और सभ्य जीवन का एक महत्वपूर्ण हिस्सा आपसी लेन-देन का मामला है। मनुष्य को अपनी आवश्यकताएँ पूरी करने के लिए एक-दूसरे की सहायता की आवश्यकता पड़ती रहती है। लेकिन यही लेन-देन जब ऋण के रूप में होता है तो अत्यधिक सामाजिक समस्याएँ पैदा कर देता है। भाई-भाई के बीच रंजिशें हो जाती हैं, मित्रों के बीच झगड़े हो जाते हैं और जब बड़े पैमाने पर व्यावसायिक संस्थानों और बैंकों से ऋण लिए जाते हैं तो कई बार सब कुछ उजड़ने और अपमान व बदनामी तक की नौबत आ जाती है।

तो एक ईमान वाले को, ऐसे व्यक्ति को जो खुदा तआला का बंदा कहलाने का दावा रखता है, इस समाज की बुराई से बचने का अल्लाह तआला ने आदेश दिया है। और फिर तरीका भी बताया है कि किस प्रकार झगड़ों और अपमान व बदनामी से बचा जा सकता है। इस्लाम ने ऋण देने वालों को भी बता दिया है कि ऋण देने के बाद उसे वापस लेने का अनुरोध कैसे करना है और लेने वालों को भी बता दिया है कि उन्होंने किस प्रकार अच्छे भुगतान की ओर ध्यान देते हुए समाज में अपना स्थान बनाना है या अपना स्थान ऊँचा करना है। कुरआन करीम ने इतनी गहराई में जाकर, मानव मनोविज्ञान को सामने रखते हुए, लेन-देन जो ऋण की स्थिति में हो उसका हिसाब रखने का तरीका सिखाया है कि यदि नीयत अच्छी हो तो यह प्रश्न ही नहीं उठता कि दोनों पक्षों को किसी प्रकार की परेशानी का सामना करना पड़े।

अल्लाह तआला फ़रमाता है:

{يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اِذَا تَدَايَنْتُمْ بِدَيْنٍ اِلٰٓى اَجَلٍ مُّسَمًّى فَاكْتُبُوْهُ}

अर्थात हे ईमान लाने वालो! जब तुम एक निश्चित अवधि के लिए ऋण का लेन-देन करो तो उसे लिख लिया करो।

अब देखिए यह कितना सुंदर आदेश है। कुछ लोग कह देते हैं कि हमें तो पूरा भरोसा है, लिखने की क्या आवश्यकता है, हम तो भाई-भाई की तरह हैं। लिखने का मतलब यह समझा जाता है कि अविश्वास है, इससे हमारे बीच दूरी पैदा होगी और रंजिशें बढ़ेंगी तथा

शेष पृष्ठ 11 पर

ख़ुत्बः जुमअः

मैं भेजा गया हूँ ताकि पृथ्वी पर पुनः तौहीद को स्थापित करूँ और मनुष्य-पूजा या पत्थर-पूजा से लोगों को मुक्ति देकर उन्हें खुदा तआला की ओर, जो एक है और जिसका कोई साथी नहीं, लौटने की प्रेरणा दूँ तथा उन्हें आंतरिक पवित्रता और सत्यनिष्ठा की ओर ध्यान दिलाऊँ।

ख़ुत्बः जुमअः सय्यदना अमीरुल मौ'मेनीन हज़रत मिर्ज़ा मसरूर अहमद ख़लीफ़तुल मसीह पंचम अय्यदहुल्लाहो तआला बिनस्रिहिल अज़ीज़, दिनांक अप्रैल 03 2026 ई. स्थान - मस्जिद मुबारक इस्लामाबाद सिर्रे (यू.के)

أَشْهَدُ أَنْ لَّا إِلٰهَ إِلَّا اللهُ وَحْدَهُ لَا شَرِيكَ لَهُ وَأَشْهَدُ أَنَّ مُحَمَّدًا عَبْدُهُ وَ رَسُوْلُهُ۔
أَمَّا بَعْدُ فَأَعُوْذُ بِاللهِ مِنَ الشَّيْطٰنِ الرَّجِيْمِ۔ بِسْمِ اللهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ ۔ اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ
رَبِّ الْعَالَمِيْنَ۔ اَلرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ ۔ مٰلِكِ يَوْمِ الدِّيْنِ ۔اِيَّاكَ نَعْبُدُ وَ اِيَّاكَ نَسْتَعِيْنُ۔
اِهْدِنَا الصِّرَاطَ الْمُسْتَقِيْمَ۔صِرَاطَ الَّذِيْنَ اَنْعَمْتَ عَلَيْهِمْ ۔ غَيْرِالْمَغْضُوْبِ عَلَيْهِمْ
وَلَاالضَّآلِّيْنَ

आँहज़रत सल्लल्लाहो अलैहि व सल्लम के संसार में तौहीद की स्थापना के लिए दर्द, प्रयास और साहस तथा शिर्क के प्रत्येक पक्ष के मुकाबले में एक दृढ़ चट्टान की तरह खड़े हो जाने और प्रत्येक जाति के शिर्कपूर्ण विचारों और शिक्षाओं के विरुद्ध सत्य बोलने के बारे में हम पहले पढ़ते रहे हैं। इसके संबंध में वर्णन करते हुए हज़रत मसीह मौऊद अलैहिस्सलाम फ़रमाते हैं:

''विचार करना चाहिए कि किस दृढ़ता के साथ आँहज़रत सल्लल्लाहो अलैहि व सल्लम अपने दावे-ए-नुबुव्वत पर, हजारों संकट उत्पन्न हो जाने, लाखों विरोधियों, रुकावट डालने वालों और डराने वालों के खड़े हो जाने के बावजूद, आरंभ से अंतिम श्वास तक स्थिर और अटल रहे। वर्षों तक आपने वे कष्ट देखे और वे दुख उठाए जो सफलता से पूरी तरह निराश कर देने वाले थे और दिन-प्रतिदिन बढ़ते जाते थे। ऐसे कष्ट जिन पर धैर्य करने से किसी सांसारिक उद्देश्य की प्राप्ति का भ्रम भी नहीं हो सकता था। बल्कि नुबुव्वत का दावा करने के कारण अपने हाथों से अपनी पहली जमाअत भी खो बैठे।'' अर्थात स्वयं अपने हाथ से पहली जमाअत, जो संबंधियों और परिवार की थी, उसे भी खो बैठे। ''और एक बात कहकर लाखों विभाजन मोल ले लिए और हजारों विपत्तियाँ अपने सिर पर बुला लीं। वतन से निकाल दिए गए। हत्या के लिए पीछा किया गया। घर और सामान नष्ट और बर्बाद हो गया। अनेक बार विष दिया गया। और जो हितैषी थे वे विरोधी बन गए तथा जो मित्र थे वे शत्रुता करने लगे। और एक लंबे समय तक ऐसी कटुताएँ उठानी पड़ीं कि जिन पर दृढ़ता से टिके रहना किसी धोखेबाज़ और मक्कार का कार्य नहीं हो सकता...''

फ़रमाते हैं: ''और फिर स्पष्टवादिता इतनी थी कि तौहीद का उपदेश देकर सभी जातियों, सभी फिरकों और संसार के उन सभी लोगों को, जो शिर्क में डूबे हुए थे, अपना विरोधी बना लिया। जो अपने और संबंधी थे, उन्हें मूर्ति-पूजा से रोककर सबसे पहले शत्रु बना लिया। यहूदियों से भी संबंध बिगाड़ लिए क्योंकि उन्हें विभिन्न प्रकार की सृष्टि-पूजा, पीर-पूजा और बुरे कर्मों से रोका। हज़रत मसीह की तकज़ीब और अपमान से मना किया, जिससे उनका हृदय अत्यंत जल उठा।'' यहूदियों को मसीह की तकज़ीब से रोका, जिससे उनका हृदय जल उठा। ''और वे कठोर शत्रुता पर उतर आए और हर समय हत्या कर देने की घात में रहने लगे। इसी प्रकार ईसाइयों को भी अप्रसन्न कर दिया गया क्योंकि जैसा उनका विश्वास था, हज़रत ईसा को न खुदा कहा गया, न खुदा का बेटा ठहराया गया और न उन्हें सूली पर चढ़कर दूसरों को बचाने वाला माना गया। अग्नि-पूजक और तारा-पूजक भी नाराज़ हो गए क्योंकि उन्हें भी उनके देवताओं की पूजा से रोका गया और मुक्ति का आधार केवल तौहीद को ठहराया गया।''

फ़रमाते हैं: ''अब न्याय से विचार करो कि क्या संसार प्राप्त करने की यही नीति थी?'' आरोप लगाया जाता है कि आँहज़रत सल्लल्लाहो अलैहि व सल्लम ने संसार प्राप्त करना चाहा। उस समय के लोग भी यही आरोप लगाते थे। ''कि प्रत्येक फिरके को ऐसी स्पष्ट और हृदय को चोट पहुँचाने वाली बातें सुनाई गईं कि सबने विरोध के लिए कमर बाँध ली और सबके दिल टूट गए। और इससे पहले कि आपकी कोई थोड़ी-सी भी जमाअत बनती या किसी आक्रमण को रोकने के लिए कुछ शक्ति एकत्र होती, सबकी प्रकृति में ऐसा उबाल पैदा कर दिया गया कि वे रक्त बहाने के प्यासे हो गए।''

आज भी जो ओरिएंटलिस्ट और इस्लाम-विरोधी लोग हैं, वे आँहज़रत सल्लल्लाहो अलैहि व सल्लम पर यही आरोप लगाते हैं। परंतु यह आरोप लगाते समय वे यह नहीं सोचते कि क्या कोई मनुष्य लाभ प्राप्त करने के लिए अपने ऊपर ऐसी स्थिति लाता है। फ़रमाया:

समय के साथ चलने की नीति तो यह थी कि जैसे कुछ लोगों को झूठा कहा गया था, वैसे ही कुछ को सच्चा भी कहा जाता।'' यदि केवल समय के पीछे चलना ही उद्देश्य होता, तो जैसे कुछ को झूठा कहा, वैसे कुछ को प्रसन्न करने के लिए सच्चा भी कह देते। ''ताकि यदि कुछ विरोधी होते तो कुछ समर्थक भी बने रहते। बल्कि यदि अरबों से कह दिया जाता कि तुम्हारे लात और उज़्ज़ा ही सच्चे हैं, तो वे उसी क्षण चरणों में गिर पड़ते और जो चाहते वह आपसे कराते। क्योंकि वे सभी संबंधी और कबीले वाले थे और जातीय पक्षधरता में अद्वितीय थे।'' संबंध और कबीलाई निकटता थी और उसके लिए वे हर बलिदान देने को तैयार रहते थे। ''और सारी बात पहले से ही बनी हुई थी, वे केवल मूर्ति-पूजा की शिक्षा से प्रसन्न हो जाते।'' केवल आप सल्लल्लाहो अलैहि व सल्लम यह कह देते कि ठीक है, तुम्हारे देवता सही हैं, तो वे प्रसन्न हो जाते। और तन-मन से आज्ञापालन स्वीकार कर लेते।'' यही मांग उन्होंने प्रस्तुत भी की थी।

''लेकिन विचार करना चाहिए कि आँहज़रत सल्लल्लाहो अलैहि व सल्लम का एक साथ प्रत्येक अपने और पराए से संबंध बिगाड़ लेना और केवल तौहीद को, जो उन दिनों संसार के लिए सबसे अधिक अप्रिय वस्तु थी और जिसके कारण सैकड़ों कठिनाइयाँ उत्पन्न होती थीं, बल्कि प्राण से मार डाले जाने का भय दिखाई देता था, दृढ़ता से पकड़ लेना—यह किस सांसारिक स्वार्थ की मांग थी? और जब पहले ही उसी कारण से अपनी सारी दुनिया और जमाअत नष्ट कर चुके थे, तो फिर उसी संकट उत्पन्न करने वाले विश्वास पर अटल रहने से, जिसके प्रकट करते ही नव-मुसलमानों को कैद, बेड़ियाँ और कठोर मारें सहनी पड़ीं, कौन-सा उद्देश्य प्राप्त करना अभिप्रेत था?''

केवल स्वयं को ही नहीं, बल्कि तौहीद की घोषणा करने पर आपके मानने वालों को भी कष्ट सहने पड़े।

''क्या संसार कमाने का यही तरीका था कि प्रत्येक व्यक्ति को ऐसा कटु वचन सुनाया जाए जो उसकी प्रकृति, आदत, इच्छा और विश्वास के विरुद्ध हो, और सबको एक ही क्षण में प्राणों का शत्रु बना लिया जाए तथा किसी एक भी जाति से मेल न रखा जाए? जो लोग लोभी और मक्कार होते हैं'' — जिनमें लालच होता है, जो किसी वस्तु की इच्छा रखते हैं या चालाकी और कपट दिखाने वाले होते हैं — ''क्या वे ऐसी ही नीतियाँ अपनाते हैं जिनसे मित्र भी शत्रु बन जाएँ? जो लोग छल से संसार प्राप्त करना चाहते हैं, क्या उनका यही सिद्धांत होता है कि एक ही बार में सारी दुनिया को शत्रुता के लिए उत्तेजित कर दें और अपने प्राण को हर समय चिंता में डाल लें? वे तो अपना उद्देश्य सिद्ध करने के लिए सबके साथ मेल-मिलाप रखते हैं और प्रत्येक फिरके को सत्यता का प्रमाण-पत्र देते हैं। खुदा तआला के लिए एकरूप हो जाना उनकी आदत कहाँ होती है? खुदा तआला की एकता और महानता का वे कब ध्यान रखते हैं? उन्हें इससे क्या मतलब होता है कि व्यर्थ खुदा तआला के लिए कष्ट उठाते फिरें। वे तो शिकारी की तरह वहीं जाल बिछाते हैं जहाँ शिकार पकड़ने का मार्ग सबसे आसान हो।''

यदि पकड़ना ही हो, धोखे से वश में करना हो, तो शिकारी की तरह जाल बिछाते हैं। ''और वही तरीका अपनाते हैं जिसमें मेहनत कम और सांसारिक लाभ अधिक हो। कपट उनका पेशा और खुशामद उनका स्वभाव होती है। सबके साथ

मीठी-मीठी बातें करना और प्रत्येक चोर और धूर्त से संबंध बनाए रखना उनका विशेष सिद्धांत होता है। मुसलमानों से अल्लाह-अल्लाह और हिंदुओं से राम-राम कहने के लिए हर समय तैयार रहते हैं और प्रत्येक सभा में हाँ में हाँ और नहीं में नहीं मिलाते रहते हैं...'' जैसी सभा होती है, वैसा ही अपने आपको ढाल लेते हैं।

''उनका खुदा तआला से क्या संबंध और उसके साथ निष्ठा रखने से क्या सरोकार? अपनी सुखी जीवन को व्यर्थ इधर-उधर की चिंताओं में डालने की उन्हें क्या आवश्यकता? उनके उस्ताद ने उन्हें केवल यही पाठ पढ़ाया होता है कि प्रत्येक से वही बात कहो कि तुम्हारा मार्ग ही सीधा है, तुम्हारी राय ही सही है और तुमने जो समझा वही ठीक है। संक्षेप में, उन्हें सत्य और असत्य, उचित और अनुचित, अच्छे और बुरे से कोई मतलब नहीं होता। बल्कि जिसके हाथ से उनका मुँह मीठा हो जाए वही उनके हिसाब में सज्जन और श्रेष्ठ होता है। और जिसकी प्रशंसा से पेट की आग भरती दिखाई दे, उसी को मुक्ति पाने वाला, स्वर्ग का अधिकारी और अनंत जीवन का स्वामी बना देते हैं।'' वही उनके लिए सब कुछ बन जाता है।

लेकिन आँहज़रत सल्लल्लाहो अलैहि व सल्लम के जीवन की घटनाओं पर दृष्टि डालने से यह बात अत्यंत स्पष्ट, प्रकट और उज्ज्वल हो जाती है कि आँहज़रत उच्चतम स्तर के एकरूप, निर्मल अंतःकरण वाले, खुदा तआला के लिए प्राण देने वाले, सृष्टि के भय और आशा से पूरी तरह मुँह मोड़ने वाले और केवल खुदा तआला पर भरोसा करने वाले थे। आपने खुदा तआला की इच्छा और प्रसन्नता में ऐसे लीन और नष्ट होकर यह चिंता ही नहीं की कि तौहीद की घोषणा करने से मेरे ऊपर कैसी-कैसी विपत्तियाँ आएँगी और मुशरिकों के हाथों कितना दुख और कष्ट उठाना पड़ेगा। बल्कि सभी कठिनाइयों, कठोरताओं और समस्याओं को अपने ऊपर सहन करके अपने मौला का आदेश पूरा किया।''

और जो-जो शर्त संघर्ष, उपदेश और नसीहत की होती है, वे सब पूरी कीं और किसी डराने वाले को कोई वास्तविकता न समझा।

"हम सच्चाई से कहते हैं कि सभी नबियों के घटनाक्रमों में ऐसे खतरों के स्थान और फिर ऐसा खुदा पर भरोसा करके खुले रूप से शिर्क और मखलूक-परस्ती से रोकने वाला, और इतने शत्रुओं के बावजूद ऐसा दृढ़ और अटल रहने वाला एक भी सिद्ध नहीं होता।"

नबियों के इतिहास में भी देख लो। इतनी दृढ़ता कहीं भी सिद्ध नहीं होती।

"अतः तनिक ईमानदारी से सोचना चाहिए कि ये सब परिस्थितियाँ किस प्रकार आँहज़रत सल्लल्लाहो अलैहि व सल्लम की आंतरिक सच्चाई पर प्रमाण दे रही हैं। इसके अतिरिक्त जब बुद्धिमान मनुष्य इन परिस्थितियों पर और भी विचार करे कि वह समय, जिसमें आँहज़रत सल्लल्लाहो अलैहि व सल्लम भेजे गए, वास्तव में ऐसा समय था कि जिसकी वर्तमान दशा एक महान और उच्च कोटि के रब्बानी सुधारक और आकाशीय मार्गदर्शक की अत्यंत आवश्यकता रखती थी, और जो-जो शिक्षा दी गई वह भी वास्तव में सच्ची और ऐसी थी जिसकी अत्यंत आवश्यकता थी।" समय इतना बिगड़ चुका था कि उस समय किसी मार्गदर्शक, किसी सुधारक और किसी नेता की आवश्यकता थी और तब आप सल्लल्लाहो अलैहि व सल्लम उस समय में आए। "और वह शिक्षा उन सभी बातों की समावेशी थी जिससे समय की सभी आवश्यकताएँ पूरी हो सकती थीं। फिर उस शिक्षा ने ऐसा प्रभाव दिखाया कि लाखों दिलों को सत्य और सच्चाई की ओर खींच लाया और लाखों हृदयों पर 'ला इलाहा इल्लल्लाह' की मुहर जमा दी, और जो नुबुव्वत का अंतिम उद्देश्य होता है," अर्थात जो मकसद होता है, "यानी मुक्ति के सिद्धांतों की शिक्षा देना, उसे ऐसी पूर्णता तक पहुँचा दिया जो किसी दूसरे नबी के हाथों किसी युग में प्राप्त नहीं हुई। अतः इन घटनाओं पर दृष्टि डालने से अनायास ही यह गवाही हृदय से उभरकर निकलेगी कि आँहज़रत सल्लल्लाहो अलैहि व सल्लम अवश्य खुदा की ओर से सच्चे मार्गदर्शक हैं। जो व्यक्ति पक्षपात और हठ के कारण इनकार करता है, उसकी बीमारी तो लाइलाज है, चाहे वह खुदा का भी इनकार कर दे। अन्यथा ये सारे सत्य के चिन्ह जो आँहज़रत सल्लल्लाहो अलैहि व सल्लम में पूर्ण रूप से एकत्र हैं, किसी और नबी में एक भी सिद्ध करके दिखा दे, तब भी मान लें।"

फिर फ़रमाते हैं: "हिंदू दूसरे सभी पैगम्बरों और पुस्तकों का खंडन करके केवल वेद का ही गुणगान कर रहे हैं कि बस वेद ही सब कुछ है। ईसाई सारी ईश्वरीय शिक्षा को इंजील पर समाप्त मान बैठे हैं। वे यह नहीं समझते कि प्रत्येक पुस्तक की प्रतिष्ठा और मूल्य उसके द्वारा तौहीद का लाभ पहुँचाने के आधार पर आँका जाता है, और जो पुस्तक तौहीद का लाभ पहुँचाने में अधिक हो, वही दर्जे में अधिक होती है।" ईश्वरीय पुस्तक की मूल बात तो यही है कि उसमें तौहीद का पाठ अधिक हो। "और यही कारण है कि यदि कोई व्यक्ति एकेश्वरवाद का इंकार करने वाला हो, चाहे उसमें कितने ही उच्च नैतिक गुण क्यों न हों, फिर भी वह मुक्ति नहीं पा सकता।" सारे उत्तम नैतिक गुण उसमें मौजूद हों, लेकिन यदि वह तौहीद का इंकार करता हो तो अल्लाह के निकट वह मुक्ति पाने वाला नहीं है। "अब इन लोगों को सोचना चाहिए कि तौहीद, जो मुक्ति का आधार है, किस पुस्तक के माध्यम से संसार में सबसे अधिक फैली। भला कोई बताए तो सही कि किस देश में वेद के माध्यम से ईश्वर की एकता फैली हुई है... कोई देश दिखाई नहीं देता जहाँ इंजील के माध्यम से तौहीद का प्रचार हुआ हो। बल्कि इंजील को मानने वाले तो एकेश्वरवादियों को भी मुक्ति प्राप्त करने वाला नहीं समझते।" अर्थात जो तौहीद को मानते हैं। "और पादरी लोग तौहीद वालों को एक अंधेरी आग में भेज रहे हैं।" वे तो यह कहते हैं कि जो एक खुदा को मानते हैं और तीन खुदाओं को नहीं मानते, वे आग में पड़ेंगे। "जहाँ रोना और दाँत पीसना होगा, और उनके कथनानुसार उस काली आग से वही व्यक्ति बचेगा जो खुदा के लिए मृत्यु, कष्ट, भूख, प्यास, दर्द, दुख, शरीर धारण करना और अवतरण को सदा के लिए उचित माने। अन्यथा बचने का कोई उपाय नहीं।" अर्थात हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम का चित्रण किया गया है। "मानो वह काल्पनिक स्वर्ग यूरोप की दो महान जातियों अंग्रेजों और रूसियों में आधा-आधा बाँट दिया जाएगा।" अब इसमें और भी बड़े देश शामिल हो गए हैं। अमेरिका वाले भी कहते हैं, बल्कि अब तो अमेरिका के राष्ट्रपति के कुछ समर्थकों की ओर से यहाँ तक कहा जाने लगा है कि मसीह का दूसरा आगमन शायद ट्रंप के रूप में होगा। इन्ना लिल्लाह। फ़रमाते हैं कि आधा-आधा बाँट दिया जाएगा। "और बाकी सभी एकेश्वरवादी इस अपराध में कि वे खुदा को हर प्रकार की उस कमी से पवित्र समझते थे जो उसकी पूर्ण महानता के विरुद्ध है, दोजख में डाले जाएँगे। संक्षेप में हमारी इस लेखनी का उद्देश्य यह है कि

आज संसार में जिस वस्तु का नाम तौहीद है, वह उम्मत आँहज़रत सल्लल्लाहो अलैहि व सल्लम के अतिरिक्त किसी अन्य समुदाय में नहीं पाई जाती, और क़ुरआन-ए-करीम के अतिरिक्त किसी अन्य पुस्तक का कोई प्रमाण नहीं मिलता जो करोड़ों मनुष्यों को ईश्वर की एकता पर स्थापित करती हो और पूर्ण आदर के साथ उस सच्चे खुदा की ओर मार्गदर्शन करती हो। प्रत्येक समुदाय ने अपना-अपना कृत्रिम खुदा बना लिया है, और मुसलमानों का वही खुदा है जो प्राचीन काल से अनश्वर, अपरिवर्तनीय और अपनी सनातन विशेषताओं में वैसा ही है जैसा पहले था। अतः ये सभी घटनाएँ ऐसी हैं जिनसे इस्लाम के मार्गदर्शक की सच्ची नुबुव्वत सूर्य से भी अधिक स्पष्ट सिद्ध होती है।"

अर्थात खुली रोशनी की तरह, सूर्य की तरह स्पष्ट है। "क्योंकि नुबुव्वत का अर्थ और रिसालत तथा पैगम्बरी का अंतिम उद्देश्य इन्हीं की पवित्र सत्ता में सिद्ध और प्रत्यक्ष हो रहा है।" यही सब कुछ सिद्ध हो रहा है। "और जैसे बनाई हुई वस्तुओं से बनाने वाले की पहचान होती है, वैसे ही बुद्धिमान लोग वर्तमान सुधार से उस रब्बानी सुधारक की पहचान कर रहे हैं।" कोई वस्तु बनाने वाले की बनाई हुई चीज़ से पहचाना जाता है कि उसने कितनी उत्तम वस्तु बनाई है। इसी प्रकार रब्बानी सुधारक की पहचान इस बात से होती है कि वह तौहीद का प्रचार करने वाला होता है।

"इसी प्रकार हजारों और भी घटनाएँ हैं जिनसे आँहज़रत सल्लल्लाहो अलैहि व सल्लम का ईश्वरीय समर्थन प्राप्त होना सिद्ध होता है। उदाहरण के लिए—

क्या यह आश्चर्यजनक घटना नहीं कि एक निर्धन, शक्तिहीन, सहाराहीन, उम्मी, अनाथ, अकेला और गरीब व्यक्ति ऐसे समय में, जबकि प्रत्येक जाति आर्थिक, सैनिक और बौद्धिक शक्ति से पूर्ण थी, ऐसी उज्ज्वल शिक्षा लेकर आया जिसने अपने निर्णायक प्रमाणों और स्पष्ट तर्कों से सबकी ज़बान बंद कर दी, और उन बड़े-बड़े लोगों की, जो स्वयं को ज्ञानी और दार्शनिक कहलवाते थे," अर्थात बड़े विद्वान और दार्शनिक, "स्पष्ट गलतियाँ निकाल दीं। और फिर अपनी निर्धनता और बेबसी के बावजूद ऐसा प्रभाव दिखाया कि बादशाहों को उनके सिंहासनों से उतार दिया और उन्हीं सिंहासनों पर गरीबों को बैठा दिया। यदि यह खुदा की सहायता नहीं थी तो और क्या था? क्या समस्त संसार पर बुद्धि, ज्ञान, शक्ति और सामर्थ्य में विजय प्राप्त करना ईश्वरीय सहायता के बिना भी हो सकता है?"

(ब्राहीन-ए-अहमदिया, रूहानी खज़ाइन जिल्द 1, पृष्ठ 108 से 119)

हज़रत मसीह मौऊद अलैहिस्सलाम फ़रमाते हैं कि "इतिहास स्पष्ट रूप से

बताता है और क़ुरआन-ए-करीम के अनेक स्थानों में पूर्ण स्पष्टता के साथ वर्णित है कि आँहज़रत सल्लल्लाहो अलैहि व सल्लम उस समय भेजे गए थे जब पूरी दुनिया में शिर्क, गुमराही और मखलूक-परस्ती फैल चुकी थी, और सभी लोगों ने सत्य सिद्धांतों को छोड़ दिया था तथा सीधे मार्ग को भूलकर हर समुदाय ने अलग-अलग नवाचारों का मार्ग अपना लिया था। अरब में मूर्ति-पूजा का अत्यधिक प्रचलन था। फारस में अग्नि-पूजा का बड़ा जोर था।" ईरानी लोग उस समय अग्नि-पूजक थे। आग की पूजा करते थे। "हिंद में मूर्ति-पूजा के अतिरिक्त सैकड़ों प्रकार की मखलूक-परस्ती फैल चुकी थी और उन्हीं दिनों में कई पुराण और पुस्तकें, जिनके अनुसार अनेक मनुष्यों को खुदा बना दिया गया और अवतारवाद की नींव डाली गई, लिखी जा चुकी थीं। और पादरी बोर्ट साहब के कथनानुसार," यहाँ आप अलैहिस्सलाम की मुराद जॉन डेवनपोर्ट है, वह कहता है कि "और कई विद्वान अंग्रेजों के अनुसार उन दिनों ईसाई धर्म से अधिक कोई धर्म भ्रष्ट न था।" जॉन डेवनपोर्ट ने भी यह लिखा है और हज़रत मसीह मौऊद अलैहिस्सलाम के समय में अन्य ईसाई इतिहासकारों और विद्वान अंग्रेजों ने भी यह लिखा कि कोई धर्म ईसाइयत जितना बिगड़ा हुआ न था। "और पादरियों की दुराचारी और गलत मान्यताओं के कारण ईसाई धर्म पर एक बड़ा कलंक लग चुका था और ईसाई मान्यताओं में एक-दो नहीं बल्कि कई वस्तुओं ने खुदा का स्थान ले लिया था। अतः

आँहज़रत सल्लल्लाहो अलैहि व सल्लम का ऐसी व्यापक गुमराही के समय में भेजा जाना, जबकि स्वयं उस युग की स्थिति एक महान चिकित्सक और सुधारक की माँग कर रही थी और ईश्वरीय मार्गदर्शन की अत्यंत आवश्यकता थी, और फिर प्रकट होकर संसार को तौहीद और सदाचार से प्रकाशित करना तथा शिर्क और मखलूक-परस्ती, जो सभी बुराइयों की जड़ है, का पूर्ण उन्मूलन करना, इस बात का स्पष्ट प्रमाण है कि आँहज़रत सल्लल्लाहो अलैहि व सल्लम खुदा के सच्चे रसूल और सभी रसूलों से श्रेष्ठ थे।

उनका सच्चा होना इस बात से सिद्ध है कि उस सार्वभौमिक गुमराही के समय में प्रकृति का नियम एक सच्चे मार्गदर्शक की माँग कर रहा था और ईश्वरीय परंपरा एक सच्चे रहनुमा की अपेक्षा कर रही थी।" अर्थात यही तकाज़ा था। "क्योंकि रब्बुल आलमीन का प्राचीन नियम यही है कि जब संसार में किसी प्रकार की कठिनाई और विपत्ति अपनी चरम सीमा तक पहुँच जाती है, तो ईश्वरीय दया उसे दूर करने की ओर ध्यान देती है। जैसे जब वर्षा रुक जाने से अत्यंत भयंकर अकाल पड़ जाता है," अर्थात वर्षा न होने से सूखा पड़ जाता है, "और प्राणियों का जीवन समाप्त होने लगता है," लोग मरने लगते हैं, "तो अंततः कृपालु खुदा वर्षा कर देता है। और जब महामारी से लाखों मनुष्य मरने लगते हैं तो या तो वायु की शुद्धि का कोई उपाय निकल आता है या कोई औषधि उत्पन्न हो जाती है। और जब कोई जाति किसी अत्याचारी के पंजे में फँस जाती है, तो अंततः कोई न्यायप्रिय और सहायता करने वाला प्रकट हो जाता है। इसी प्रकार जब लोग खुदा का मार्ग भूल जाते हैं और तौहीद तथा सत्य-परस्ती को छोड़ देते हैं, तो खुदा तआला अपनी ओर से किसी व्यक्ति को पूर्ण अंतर्दृष्टि प्रदान करके और अपने वचन तथा प्रकाशना से सम्मानित करके मानव जाति के मार्गदर्शन के लिए भेजता है ताकि जितना बिगाड़ हो चुका है उसका सुधार करे। इसमें मूल सत्य यह है कि पालनहार, जो संसार को कायम रखने वाला है," जो दुनिया को स्थिर रखने वाला है, "और संसार का अस्तित्व तथा स्थायित्व उसी के सहारे से है," उसी की वजह से है, "वह अपनी कृपा पहुँचाने वाली किसी विशेषता को सृष्टि से नहीं रोकता और न निष्क्रिय छोड़ता है, बल्कि उसकी प्रत्येक विशेषता अपने अवसर पर तुरंत प्रकट हो जाती है। अतः जबकि बुद्धिसंगत विचार से यह निश्चित हो गया कि प्रत्येक विपत्ति का प्रभाव तोड़ने के लिए खुदा तआला की वही विशेषता प्रकट होती है जो उसके मुकाबले के लिए है, और यह बात इतिहासों से, विरोधियों के स्वीकार से तथा स्वयं क़ुरआन-ए-करीम के स्पष्ट कथन से सिद्ध हो चुकी है कि आँहज़रत सल्लल्लाहो अलैहि व सल्लम के प्रकट होने के समय यह विपत्ति अत्यधिक फैल चुकी थी कि संसार की सभी जातियों ने तौहीद, निष्कपटता और सत्य-परस्ती का सीधा मार्ग छोड़ दिया था, और यह बात भी सभी को ज्ञात है कि इस वर्तमान बिगाड़ का सुधार करने वाले तथा संसार को शिर्क और मखलूक-परस्ती के अंधकार से निकालकर तौहीद पर स्थापित करने वाले केवल आँहज़रत सल्लल्लाहो अलैहि व सल्लम ही हैं, कोई दूसरा नहीं। अतः इन सब प्रस्तावनाओं से यह परिणाम निकला कि आँहज़रत सल्लल्लाहो अलैहि व सल्लम खुदा की ओर से सच्चे मार्गदर्शक हैं।"

(ब्राहीन-ए-अहमदिया, रूहानी खज़ाइन जिल्द 1, पृष्ठ 112 से 114, हाशिया नंबर 10)

अतः आँहज़रत सल्लल्लाहो अलैहि व सल्लम ही वह महान अस्तित्व हैं जिन्होंने तौहीद को वास्तविक रूप में संसार में स्थापित किया।

पिछले ख़ुत्बों में इसके बहुत से प्रसंग और बहुत से संदर्भ मैं बयान कर चुका हूँ कि किस प्रकार आँहज़रत सल्लल्लाहो अलैहि व सल्लम तौहीद के लिए प्रयास किया करते थे और फिर

हम इस युग में देखते हैं कि अल्लाह तआला ने अपने वादे के अनुसार आप सल्लल्लाहो अलैहि व सल्लम के सच्चे आशिक़ को तौहीद की स्थापना के लिए नियुक्त किया, क्योंकि इस युग में हज़रत मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद क़ादियानी मसीह मौऊद और महदी माहूद अलैहिस्सलाम, जो मसीह मौऊद और महदी माहूद भी हैं, आँहज़रत सल्लल्लाहो अलैहि व सल्लम की शिक्षा और सुन्नत का व्यावहारिक नमूना थे, और आपका हृदय अपने स्वामी की आज्ञाकारिता में अल्लाह तआला की तौहीद को फैलाने के लिए एक पीड़ा से भरा हुआ था।

अतः हमें आपकी पुस्तकों और आपके व्यावहारिक जीवन में इसके बहुत से उदाहरण दिखाई देते हैं, जिनमें से कुछ का उल्लेख मैं करता हूँ। हज़रत मसीह मौऊद अलैहिस्सलाम फ़रमाते हैं:

"अल्लाह तआला का हमारे साथ भी बड़ा अद्भुत व्यवहार है। हमारा यह इल्हाम कि اَنْتَ مِنِّیْ بِمَنْزِلَةِ تَوْحِیْدِیْ وَ تَفْرِیْدِیْ एक नई शैली का इल्हाम है। हमने इससे पहले किसी इल्हामी वाक्य में इस प्रकार के शब्द नहीं देखे। इसके अर्थ जो हमारे विचार में आते हैं, वे यह हैं कि

ऐसा व्यक्ति तौहीद के समान होता है, जो ऐसे समय में नियुक्त किया जाए जब संसार में तौहीद-ए-इलाही का अत्यधिक अपमान किया गया हो और उसे अत्यंत तुच्छ दृष्टि से देखा जाता हो। ऐसे समय में आने वाला व्यक्ति तौहीद का सजीव रूप होता है।"

(मलफ़ूज़ात पृष्ठ 1, संस्करण 2022)

यह एक सभा में आपने बयान किया था। एक समाचार पत्र ने इसे इस प्रकार लिखा और दूसरे समाचार पत्र अलबदर ने कुछ विस्तार से इस प्रकार लिखा है कि आपने फ़रमाया:

"उस नियुक्त किए गए व्यक्ति को तौहीद की ऐसी प्यास लगाई जाती है कि वह अपने सभी उद्देश्यों और इच्छाओं को एक ओर रखकर तौहीद को स्थापित करने में स्वयं तौहीद का साकार रूप बन जाता है। उसके उठने-बैठने, चलने-फिरने, हर गति और शांति तथा प्रत्येक कथन और कर्म में तौहीद की लौ लगी रहती है।"

(अल-बदर नंबर 12, दिनांक 10 अप्रैल 1903, पृष्ठ 91, कॉलम नंबर 2)

फ़रमाया: "हर व्यक्ति अपना एक उद्देश्य और लक्ष्य निर्धारित करता है, किन्तु इस व्यक्ति" का उद्देश्य, अर्थात जो अल्लाह तआला की मुहब्बत में डूबा हुआ है, "का उद्देश्य और अभिलाषा केवल अल्लाह तआला की तौहीद होती है। वह अल्लाह तआला की तौहीद को अपने स्वाभाविक भावों और उद्देश्यों से भी ऊपर रख लेता है। अपनी सारी आवश्यकताओं को पीछे छोड़ देता है। इसी प्रकार प्रत्येक व्यक्ति के अपने उद्देश्यों का एक बुत होता है और वह उसे प्राप्त करना चाहता है, किन्तु यह केवल अल्लाह तआला के अधिकार में होता है कि उसे वहाँ तक पहुँचा दे या उससे पहले ही उसकी आयु समाप्त कर दे।"

लक्ष्य प्राप्त करने के लिए लोगों की, व्यापारियों की, व्यवसाय करने वालों की और सांसारिक उद्देश्य रखने वालों की बड़ी इच्छाएँ होती हैं और उन्होंने अपना एक लक्ष्य निर्धारित किया होता है। लेकिन या तो अल्लाह तआला उन्हें वहाँ पहुँचा देता है या उससे पहले उनका अंत हो जाता है। "वह अपने धन, सम्मान, संतान या अन्य आवश्यकताओं के लिए बेचैन रहता है और कई बार लोग इन्हीं कठिनाइयों में पड़कर आत्महत्या तक कर लेते हैं। किन्तु वह व्यक्ति जो खुदा की ओर से नियुक्त होकर आता है, उसका यही उत्साह खुदा तआला की तौहीद के लिए हो जाता है और अपनी व्यक्तिगत इच्छाओं के स्थान पर वह खुदा तआला की तौहीद के लिए व्याकुल और आत्मविस्मृत हो जाता है।"

फ़रमाते हैं कि "मैं समझता हूँ कि ऐसे समय में ये शब्द खुदा तआला की ओर से आते हैं कि اَنْتَ مِنِّیْ بِمَنْزِلَةِ تَوْحِیْدِیْ وَ تَفْرِیْدِیْ क्योंकि अल्लाह तआला को अपनी तौहीद अत्यंत प्रिय है। यही तौहीद थी जिसके लिए अल्लाह तआला ने कभी महामारी, कभी अकाल और कभी अपने प्रिय नबियों अलैहिमुस्सलाम की तलवार के माध्यम से इसके स्थापित करने के लिए हजारों मुशरिक लोगों को नष्ट कर दिया।

मक्का और मदीना मुनव्वरा की परिस्थितियाँ भी केवल इसी के कारण जटिल हुई थीं। हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम का मामला भी इसी तौहीद के लिए था।"

(मलफ़ूज़ात पृष्ठ 1-2, संस्करण 2022)

हज़रत मसीह मौऊद अलैहिस्सलाम शिर्क और उसकी सूक्ष्म प्रकारों

का उल्लेख करते हुए फ़रमाते हैं कि "यह भी आवश्यक है कि हर प्रकार के शिर्क से बचा जाए। न सूर्य, न चंद्रमा, न आकाश के तारे, न वायु, न अग्नि, न जल और न पृथ्वी की कोई अन्य वस्तु पूज्य ठहराई जाए। और न संसार के साधनों को ऐसी प्रतिष्ठा दी जाए और न उन पर ऐसा भरोसा किया जाए मानो वे खुदा के सहभागी हों। और न अपनी शक्ति और प्रयास को कोई वस्तु समझा जाए, क्योंकि यह भी शिर्क की एक प्रकार है। बल्कि सब कुछ करने के बाद यह समझा जाए कि हमने कुछ नहीं किया, और न अपने ज्ञान पर कोई घमंड किया जाए और न अपने कर्मों पर अभिमान, बल्कि स्वयं को वास्तव में अज्ञानी और आलसी समझें और हर समय अल्लाह तआला की चौखट पर विनम्र बने रहें।"

सब कुछ करने के बावजूद भी अल्लाह के सामने झुको कि ऐ अल्लाह! तेरे अनुग्रह से ही सब कुछ होगा, सभी परिणाम उत्पन्न होंगे। "मनुष्य का ज्ञान किसी शिक्षक का मोहताज है और फिर भी सीमित है।" मनुष्य का ज्ञान किसी पढ़ाने वाले का मोहताज है, लेकिन फिर भी सीमित है। "किन्तु उसका ज्ञान किसी शिक्षक का मोहताज नहीं," अर्थात अल्लाह तआला का ज्ञान किसी सिखाने वाले का मोहताज नहीं, "और फिर भी असीमित है। मनुष्य की श्रवण शक्ति वायु की मोहताज है और सीमित है।" सुनने की शक्ति के लिए मनुष्य को वायु चाहिए और फिर भी वह सीमित सीमा तक ही सुन सकता है। "किन्तु खुदा की सुनने की शक्ति स्वाभाविक शक्ति से है और असीमित है। और मनुष्य की दृष्टि सूर्य या किसी अन्य प्रकाश की मोहताज है और फिर सीमित है, किन्तु खुदा की दृष्टि स्वाभाविक प्रकाश से है और असीमित है। इसी प्रकार मनुष्य की उत्पन्न करने की शक्ति किसी पदार्थ की मोहताज है और समय की भी मोहताज है तथा सीमित भी है, किन्तु खुदा की उत्पन्न करने की शक्ति न किसी पदार्थ की मोहताज है, न किसी समय की, और असीमित है; क्योंकि उसकी सभी विशेषताएँ अद्वितीय हैं और जैसे उसकी कोई समानता नहीं, वैसे ही उसकी विशेषताओं की भी कोई समानता नहीं। यदि वह एक विशेषता में भी अपूर्ण हो, तो फिर सभी विशेषताओं में अपूर्ण होगा। इसलिए उसकी तौहीद स्थापित नहीं हो सकती जब तक वह अपनी सत्ता की तरह अपनी सभी विशेषताओं में भी अद्वितीय न हो। यही वह तौहीद है जो क़ुरआन-ए-करीम ने सिखाई है और जो ईमान का आधार है।"

(लेक्चर लाहौर पृष्ठ 154-155)

आजकल के प्रभावों के कारण कभी-कभी बच्चों में भी यह प्रश्न उठते हैं और वे लिखते रहते हैं कि अल्लाह तआला को किसने पैदा किया? अल्लाह तआला कहाँ से आया? संभवतः बड़े उन्हें बताते हैं या स्वयं उनके मन में यह प्रश्न उठते हैं। लेकिन अल्लाह तआला की विशेषताएँ ऐसी हैं कि वह सदा से है और सदा रहेगा तथा असीमित है। उसी ने प्रत्येक वस्तु को पैदा किया है। उसे किसी ने पैदा नहीं किया। इसलिए किसी भी अंतिम सत्ता की जो कल्पना की जा सकती है, जो स्वयं अस्तित्व में आई हो, वह केवल खुदा तआला ही है।

हज़रत मसीह मौऊद अलैहिस्सलाम फ़रमाते हैं:

"याद रहे कि वास्तविक तौहीद, जिसका स्वीकार खुदा हमसे चाहता है और जिसके स्वीकार से मुक्ति जुड़ी हुई है, यह है कि खुदा तआला को अपनी सत्ता में हर प्रकार के सहभागी से, चाहे वह मूर्ति हो, मनुष्य हो, सूर्य हो, चंद्रमा हो, स्वयं का अहंकार हो या अपनी योजना और छल-कपट हो, पवित्र समझा जाए, और उसके मुकाबले में किसी को शक्तिशाली न माना जाए, किसी को रोज़ी देने वाला न माना जाए, किसी को सम्मान देने वाला या अपमानित करने वाला न समझा जाए, किसी को सहायक और मददगार न ठहराया जाए। और दूसरे यह कि अपनी मुहब्बत उसी के लिए विशेष कर दी जाए, अपनी इबादत उसी के लिए विशेष कर दी जाए, अपनी विनम्रता उसी के लिए विशेष कर दी जाए, अपनी आशाएँ उसी से जोड़ी जाएँ और अपना भय भी उसी से विशेष रखा जाए।

अतः इन तीन प्रकार की विशेषताओं के बिना कोई तौहीद पूर्ण नहीं हो सकती। पहली, सत्ता के दृष्टिकोण से तौहीद, अर्थात उसके अस्तित्व के मुकाबले में सभी अस्तित्वों को नष्ट समान समझना," अर्थात समाप्त हो जाने वाली वस्तुएँ समझना, "और सबको नाशवान और असत्य मानना।" सभी वस्तुएँ अपनी सत्ता में नाशवान और अपूर्ण हैं। "दूसरी, विशेषताओं के दृष्टिकोण से तौहीद, अर्थात पालनहार और उपास्य होने की विशेषताएँ अल्लाह तआला के अतिरिक्त किसी में न मानना। और जो वस्तुएँ प्रत्यक्ष रूप में पालनहार या लाभ पहुँचाने वाली दिखाई देती हैं," जिनसे मनुष्य लाभ उठाता है और उन्हें भी पालनहार समझ बैठता है, "उन्हें भी उसी के हाथ की व्यवस्था मानना।"

न कोई अमेरिका है, न कोई इस्राईल, न कोई संसार की अन्य बड़ी शक्ति, बल्कि केवल अल्लाह तआला की शक्ति है। यदि मुसलमान भी इस बात को पहचान लें तो निश्चित ही उनकी सफलता है। "तीसरी, अपनी मुहब्बत, सत्यनिष्ठा और पवित्रता के दृष्टिकोण से तौहीद, अर्थात प्रेम आदि दासत्व के चिह्नों में किसी दूसरे को अल्लाह तआला का सहभागी न ठहराना और उसी में पूर्ण रूप से खो जाना।"

(सिराजुद्दीन ईसाई के चार सवालों का जवाब पृष्ठ 349-350)

जिस प्रकार अल्लाह तआला से प्रेम होना चाहिए, वैसा किसी और से न हो।

फिर आप अलैहिस्सलाम फ़रमाते हैं: "अब इस युग में जब खुदा ने देखा कि धरती बिगड़ गई है और करोड़ों मनुष्यों ने शिर्क का मार्ग अपना लिया है और चालीस करोड़ से भी अधिक ऐसे लोग संसार में हो गए हैं जो एक असहाय मनुष्य, मरियम के पुत्र को खुदा बना रहे हैं।" उस समय ईसाइयों की संख्या चालीस करोड़ थी। "और साथ ही मद्यपान, उच्छृंखलता, संसार-प्रेम और लापरवाह जीवन अपनी चरम सीमा तक पहुँच गया, तो अल्लाह तआला ने मुझे इस कार्य के लिए नियुक्त किया कि मैं इन बुराइयों का सुधार करूँ। अतः अब तक मेरे हाथ पर लगभग एक लाख मनुष्य बुराई, गलत आस्था और बुरे कर्मों से तौबा कर चुके हैं।"

यह उस समय की बात है जब आपने यह फ़रमाया। अब तो अल्लाह तआला के अनुग्रह से करोड़ों लोग आपकी जमाअत में शामिल हो चुके हैं। और निशानों का भी आपने उल्लेख फ़रमाया कि "और डेढ़ सौ से अधिक निशान प्रकट हो चुके हैं, जिनके इस देश में लाखों मनुष्य गवाह हैं, और

मैं भेजा गया हूँ ताकि धरती पर पुनः तौहीद को स्थापित करूँ और मनुष्य-पूजा तथा पत्थर-पूजा से लोगों को मुक्ति देकर उन्हें उस एकमात्र, बिना सहभागी वाले खुदा की ओर लौटाऊँ और उन्हें आंतरिक पवित्रता और सत्यनिष्ठा की ओर ध्यान दिलाऊँ।

अतः मैं देखता हूँ कि लोगों में एक आंदोलन उत्पन्न हो गया है और हजारों लोग मेरे हाथ पर तौबा करते जा रहे हैं, और आकाश से ऐसी हवा चल रही है कि अब लोगों की प्रकृतियाँ तौहीद के अनुकूल होती जा रही हैं, और स्पष्ट रूप से ज्ञात होता है कि अब अल्लाह तआला का यह इरादा है कि मनुष्य-पूजा को संसार से समाप्त कर दे। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए सैकड़ों साधन उत्पन्न किए गए हैं।"

(मकतूबात-ए-अहमद पृष्ठ 256-257, नवीन संस्करण)

अल्लाह तआला ने हमें भी वे साधन प्रदान किए हुए हैं और उनके माध्यम से हम तब्लीग़ भी करते हैं, और

हर अहमदी का यह कार्य है कि तौहीद को फैलाने के लिए भी प्रयास करे।

आप अलैहिस्सलाम फ़रमाते हैं: "जहाँ तक हमसे यह प्रश्न पूछा जाता है कि मूर्ति-पूजा की परिभाषा क्या है और कौन-सी वस्तु लोगों को मूर्ति-पूजक बनाती है, तो आवश्यक है कि हम इन बातों को स्पष्ट करें। जानना चाहिए कि इबादत, विश्वासों का परिणाम है और सत्य के अनुयायियों के विश्वास यह हैं कि खुदा एक है और अल्लाह जल्ल शानुहू की विशेषताएँ सदा से स्थायी हैं, अर्थात न उसकी विशेषताओं में परिवर्तन है और न बदलाव, न उनका आरंभ है और न अंत। सच्चा और वास्तविक खुदा अनादि और अनंत है, कोई सृष्ट वस्तु नहीं कि उत्पन्न हुआ हो।"

जैसा कि पहले भी मैंने बताया, कुछ लोगों के प्रश्नों का उत्तर इसमें आ गया कि सच्चा और वास्तविक खुदा अनादि और अनंत है, वह पैदा नहीं हुआ। "और वह उन विशेषताओं से भी श्रेष्ठ है जिन्हें स्वीकार करने से हमारा हृदय घृणा करे। उसकी विशेषताएँ तो हमारे हृदय की पुष्टि हैं और हमारा हृदय उसकी विशेषताओं से परिचित है। वह अनादि काल से एक है। कौन-सा हृदय है जो उसकी एकता का इंकार करता हो? वह सदा से एक है और कौन-सा हृदय है जो उसकी त्रिमूर्ति का स्वीकार करता हो?"

(मकतूबात-ए-अहमद पृष्ठ 489-490)

ईसाई शिक्षा यह है कि तीन खुदा हैं। तो जो नेक प्रकृति वाला है, वह कभी स्वीकार नहीं कर सकता कि त्रिमूर्ति सत्य है। आप अलैहिस्सलाम फ़रमाते हैं: "मैं त्रिमूर्ति की बुराइयों के सुधार के लिए भेजा गया हूँ।" अर्थात ईसाइयत में जो

विकृतियाँ उत्पन्न हो गई हैं, उनके सुधार के लिए भेजा गया हूँ। "इसलिए यह पीड़ादायक दृश्य कि संसार में चालीस करोड़ से भी अधिक ऐसे लोग पाए जाते हैं जिन्होंने हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम को खुदा समझ रखा है, मेरे हृदय को इतना दुःख पहुँचाता रहा है कि मैं नहीं समझता कि अपने जीवन में मुझे इससे बढ़कर कोई दुःख हुआ हो। बल्कि यदि दुःख और चिंता से मरना मेरे लिए संभव होता तो यह दुःख मुझे नष्ट कर देता कि क्यों ये लोग खुदाए वाहिद ला शरीक को छोड़कर एक असहाय मनुष्य की पूजा कर रहे हैं और क्यों ये लोग उस नबी पर ईमान नहीं लाते जो सच्चा मार्गदर्शन और सीधा रास्ता लेकर संसार में आया है।" अर्थात आँहज़रत सल्लल्लाहो अलैहि व सल्लम पर क्यों ईमान नहीं लाते। "हर समय मुझे यह भय रहा है कि कहीं इस दुःख के आघातों से मैं नष्ट न हो जाऊँ..."

आप अलैहिस्सलाम फ़रमाते हैं: "अल्लाह तआला ने क़ुरआन-ए-करीम में सत्य फ़रमाया है कि निकट है कि इस झूठे आरोप से आकाश फट जाएँ कि एक असहाय मनुष्य को खुदा बनाया जाता है, और

मेरा इस पीड़ा से यह हाल है कि यदि दूसरे लोग स्वर्ग चाहते हैं तो मेरा स्वर्ग यही है कि मैं अपने जीवन में मनुष्यों को इस शिर्क से मुक्त होते और खुदा का वैभव प्रकट होते देख लूँ। और मेरी आत्मा हर समय यह दुआ करती है कि ऐ खुदा! यदि मैं तेरी ओर से हूँ और यदि तेरे अनुग्रह की छाया मेरे साथ है, तो मुझे वह दिन दिखा कि हज़रत मसीह मौऊद अलैहिस्सलाम के सिर से यह आरोप हटा दिया जाए कि नऊज़ूबिल्लाह उन्होंने खुदाई का दावा किया था। एक लंबा समय बीत गया कि मेरी पाँचों वक्त की यही दुआएँ हैं कि खुदा इन लोगों को दृष्टि प्रदान करे और वे उसकी एकता पर ईमान लाएँ और उसके रसूल को पहचान लें तथा त्रिमूर्ति के विश्वास से तौबा करें।"

(मजमूआ इश्तिहारात पृष्ठ 547-548, संस्करण 2018)

ईसाइयत व्यवहारिक रूप से तो समाप्त होती जा रही है। उनका त्रित्व का सिद्धांत अब केवल पुस्तकों तक ही सीमित रह गया है। विशेष रूप से यूरोप में बहुत कम लोग हैं जो उस पर व्यवहार करते हैं। लेकिन अफ्रीका और दक्षिण अमेरिका में अभी भी ऐसे लोग हैं। और जो लोग त्रित्व के सिद्धांत को छोड़ भी रहे हैं, वे भी एक खुदा को नहीं मानते। इसलिए

तौहीद पर स्थापित करने के लिए हमें जहाँ तक संभव हो प्रयास करना चाहिए कि यह संदेश पहुँचाएँ।

अल्लाह तआला करे कि जिस उद्देश्य को पूरा करने के लिए अल्लाह तआला ने हज़रत मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद क़ादियानी मसीह मौऊद और महदी माहूद अलैहिस्सलाम को भेजा था और जिस तौहीद की शिक्षा का आँहज़रत सल्लल्लाहो अलैहि व सल्लम ने ऐलान फ़रमाया था, उस वास्तविक तौहीद पर हम स्वयं भी चलने वाले हों और संसार में उसे फैलाने वाले भी हों, क्योंकि अब मानवता के अस्तित्व का यही एक समाधान है। इसके अतिरिक्त कोई दूसरा समाधान नहीं। अल्लाह तआला हमें इसकी तौफीक प्रदान फ़रमाए।

नमाज़ के बाद मैं दो नमाज़ें जनाज़ा ग़ायब पढ़ाऊँगा।

एक हैं श्रीमान ख़्वाजा ज़फ़र अहमद साहिब, जो ज़िला सियालकोट के पूर्व अमीर थे।

आजकल कुछ समय से अमेरिका में थे। पिछले दिनों इक्यानवे (91) वर्ष की आयु में उनका देहांत हो गया। इन्ना लिल्लाहे व इन्ना ईलेही राजेऊन। मरहूम मूसी थे।

उनकी बेटी हफ़्सा हई कहती हैं कि बचपन से ही हमने उनकी जीवन-शैली को जमाअत की सेवा में निष्ठा, विनम्रता और पूर्ण लगन के साथ व्यतीत करते देखा है। ख़िलाफ़त से उनकी गहरी निष्ठा उनकी व्यक्तित्व की विशेष पहचान थी, जिसने उनकी संतान और परिवार के हृदयों में भी ख़िलाफ़त से प्रेम और वफ़ादारी उत्पन्न करने में मूल भूमिका निभाई। और यह वास्तव में सत्य भी है। वे अत्यंत वफ़ादार और निज़ाम-ए-जमाअत से निष्ठा रखने वाले व्यक्ति थे। युवावस्था से लेकर अंतिम आयु तक उन्हें विभिन्न सेवाओं की तौफीक मिलती रही। ख़ुद्दामुल अहमदिया में ज़िला क़ायद के रूप में, स्थानीय क़ाइद के रूप में, फिर स्थानीय अमीर और ज़िला अमीर के रूप में सेवा करने का अवसर मिलता रहा। हज़रत मसीह मौऊद अलैहिस्सलाम के मेहमानों की सेवा का उन्हें बड़ा शौक था और मरकज़ से जो प्रतिनिधिमंडल जाते थे, उन्हें हमेशा अपने घर में ठहराते और उनकी सेवा किया करते थे। बड़े प्रसन्न मन से उनकी मेहमाननवाज़ी करते थे। जब वे यह सेवा कर रहे होते थे तो उनके चेहरे पर विशेष संतोष दिखाई देता था। कभी किसी पदाधिकारी के बारे में कोई अनुचित बात न उन्होंने कही और न ही सुनना पसंद करते थे। वे अपने सामने आलोचना की अनुमति नहीं देते थे। अल्लाह तआला पर उन्हें अत्यंत पूर्ण भरोसा था। चाहे जमाअती सेवा हो या व्यक्तिगत जीवन, जब भी कोई परीक्षा आई, उनकी पूरी ध्यान दुआ की ओर रहती थी और अल्लाह तआला पर पूर्ण विश्वास था। उनकी बेटी कहती हैं कि हमने भी देखा कि अधिकांश अवसरों पर अल्लाह तआला ने उनकी भरपूर सहायता फरमाई और उनकी दुआएँ स्वीकार हुईं। उन्होंने अपनी माता की भी बहुत सेवा की। जब वे बीमार रहीं तो कई वर्षों तक बड़े धैर्य और प्रेम से उनकी सेवा करते रहे।

उनके परिवार में पत्नी के अतिरिक्त तीन बेटियाँ, नाती-नातिनें और परनाती आदि शामिल हैं। अल्लाह तआला उनसे मग़फ़िरत और रहमत का व्यवहार फ़रमाए।

इसी प्रकार प्रशासनिक दृष्टि से वे ज़िला अमीर भी थे, इसलिए उन्हें हर जमाअत का ज्ञान था। गाँव की सबसे छोटी जमाअत का भी पता था और सभी रास्तों की जानकारी थी। ज़िले की परिस्थितियों पर उनकी गहरी नज़र रहती थी। ऐसा नहीं था कि केवल अमीर बनकर शहर में बैठे रहते हों, बल्कि वे हर स्थान पर जाया करते थे। और जब हालात अच्छे थे तथा सियालकोट से जलसा सालाना में शामिल होने वालों के लिए विशेष रेलगाड़ियाँ चला करती थीं, तो वे बड़े अनुशासन और व्यवस्था के साथ उसका प्रबंध किया करते थे। वे अत्यंत प्रेम करने वाले व्यक्ति थे और जैसा कि मैंने कहा, सदैव निष्ठा और वफ़ा से भरे रहते थे। बहुत विनम्र इंसान थे। अल्लाह तआला उनकी मग़फ़िरत फ़रमाए।

दूसरा उल्लेख है श्रीमान उदरागो हालीदू (Ouedraogo Halidou) साहिब का। ये बुर्किना फासो के स्थानीय अहमदी थे। सेना में नौकरी करते थे और आजकल आयोगिया के एक गाँव में ड्यूटी पर तैनात थे, क्योंकि वहाँ आतंकवादियों ने बहुत उपद्रव मचा रखा है। 3 मार्च को ड्यूटी के दौरान आतंकवादियों के हमले में उनका देहांत हो गया। वे शहीद हो गए। इन्ना लिल्लाहे व इन्ना ईलेही राजेऊन। उनकी आयु चालीस वर्ष थी। वे एक निष्ठावान सेवक थे। 2007 में उन्होंने अहमदियत स्वीकार की और वे तथा उनकी पत्नी अपने परिवार में अकेले अहमदी थे। उनके पूरे परिवार में कोई अन्य अहमदी नहीं था।

रीजनल मुबल्लिग़ सआदत साहिब कहते हैं कि मरहूम जमाअत के अत्यंत सक्रिय सदस्य थे और जमाअत तथा ख़िलाफ़त से गहरा संबंध रखते थे। वे बहुत नेक, इबादतगुज़ार, निष्ठावान अहमदी युवक थे। क़ाइद मजलिस ख़ुद्दामुल अहमदिया भी रह चुके थे। चंदों के भुगतान में नियमित थे। जमाअती कार्यक्रमों में बढ़-चढ़कर भाग लेते थे। सेना की नौकरी के बावजूद बुर्किना फासो के जलसा सालाना में प्रत्येक वर्ष शामिल होते थे। मुर्ब्बियान और मुअल्लिमीन के साथ बड़े सम्मान और आदर से पेश आते तथा उनकी सहायता भी किया करते थे। 2008 में जब मैं घाना के दौरे पर गया था — 2005 में मैं बुर्किना फासो भी गया था — तो वहाँ बुर्किना फासो के ख़ुद्दाम का एक काफ़िला साइकिलों पर आया था। उन्होंने एक हज़ार किलोमीटर से अधिक की यात्रा की थी, और उनकी साइकिलें भी यहाँ जैसी अच्छी नहीं थीं, बल्कि टूटी-फूटी साइकिलें थीं, सड़कें भी खराब थीं, फिर भी उन्होंने एक हज़ार किलोमीटर से अधिक की यात्रा की। वे घाना पहुँचे और वहाँ मुझसे मिले। वे हमेशा जलसों में भी साइकिल पर जाया करते थे।

सिम्पोरे अब्दुल रहमान (Simpore Abdoul Rehman) साहिब, स्थानीय मिशनरी, कहते हैं कि मैंने उन्हें जमाअत की निस्वार्थ सेवा करने वाला और हर समय सेवा के लिए तैयार पाया। किसी भी कार्य के लिए बुलाया जाता तो तुरंत हाज़िर हो जाते। जलसा सालाना और अन्य संगठनात्मक कार्यक्रमों में पूरी ज़िम्मेदारी से काम करते थे। अपने कार्य के कारण इतने समर्पित थे कि लोग उन्हें "छोटा मुअल्लिम" कहा करते थे, बल्कि मुअल्लिम भी उतनी समर्पण-भावना से कार्य नहीं करते जितना वे किया करते थे। जब उन्हें सेना में नौकरी नहीं मिली थी तो वे बहुत चिंतित रहते थे कि आजकल मेरे पास कोई काम नहीं, मैं गरीब हूँ और जमाअत की उन्नति में किस प्रकार भाग ले सकता हूँ। बहरहाल, जब उन्हें नौकरी मिली तो उन्होंने नियमित रूप से चंदा देना शुरू किया। जमाअत के साथ उनका बहुत गहरा संबंध था। जहाँ भी उनका तबादला होता, वहाँ पहुँचकर सबसे पहले जमाअती सेंटर या मस्जिद की तलाश करते और नमाज़-ए-जुमा आदि में नियमित रूप से शामिल होते थे।

उनके परिवार में माता और पत्नी के अतिरिक्त एक बेटा और दो बेटियाँ शामिल हैं। अल्लाह तआला उनसे मग़फ़िरत और रहमत का व्यवहार फ़रमाए।

★ ★ ★

पृष्ठ 1 का शेष

ने स्वीकार किया और विवाह हो गया। उसके बाद वलीमा सुन्नत है। यदि उसकी भी सामर्थ्य नहीं तो वह भी क्षम्य है। यदि मनुष्य मितव्ययिता से काम ले तो उसे कोई हानि नहीं होती। अत्यंत दुःख की बात है कि लोग अपनी सांसारिक इच्छाओं और थोड़ी देर की ख़ुशियों के लिए ख़ुदा तआला को नाराज़ कर लेते हैं, जो उनकी बर्बादी का कारण बनता है। देखो, सूद कितना गंभीर गुनाह है। क्या उन लोगों को यह ज्ञात नहीं कि सूअर का मांस अत्यंत मजबूरी की अवस्था में खाने की अनुमति दी गई है। जैसा कि ख़ुदा तआला फ़रमाता है:

"فَمَنِ اضْطُرَّ غَيْرَ بَاغٍ وَّلَا عَادٍ فَلَآ اِثْمَ عَلَيْهِ ط اِنَّ اللّٰهَ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ"

अर्थात् जो व्यक्ति न विद्रोही हो और न सीमा से आगे बढ़ने वाला हो, उस पर कोई गुनाह नहीं। निश्चय ही अल्लाह अत्यंत क्षमाशील और दयावान है।

किन्तु सूद के बारे में यह नहीं कहा गया कि मजबूरी की अवस्था में वह जायज़ है, बल्कि उसके विषय में यह आदेश है:

"يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوا اتَّقُوا اللّٰهَ وَذَرُوْا مَا بَقِيَ مِنَ الرِّبٰٓوا اِنْ كُنْتُمْ مُّؤْمِنِيْنَ ○ فَاِنْ لَّمْ تَفْعَلُوْا فَاْذَنُوْا بِحَرْبٍ مِّنَ اللّٰهِ وَرَسُوْلِهٖ"

अर्थात् ऐ ईमान लाने वालो! अल्लाह का तक़वा अपनाओ और जो सूद बाकी रह गया है उसे छोड़ दो यदि तुम वास्तव में ईमान वाले हो। और यदि तुम ऐसा नहीं करोगे तो अल्लाह और उसके रसूल की ओर से युद्ध की घोषणा सुन लो।

हमारा तो यह मत है कि जो ख़ुदा तआला पर भरोसा करता है, उसे ऐसी आवश्यकता ही नहीं पड़ती। यदि मुसलमान इस परीक्षा में पड़े हुए हैं तो यह उनकी अपनी बुरी करतूतों का परिणाम है। यदि हिन्दू यह गुनाह करते हैं तो वे धनवान हो जाते हैं, किन्तु मुसलमान यह गुनाह करते हैं तो नष्ट हो जाते हैं। "خَسِرَ الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةَ" अर्थात् वे दुनिया और आखिरत दोनों खो बैठते हैं। अतः क्या यह आवश्यक नहीं कि मुसलमान इससे बचें।

मनुष्य को चाहिए कि अपने जीवन-यापन के तरीकों में पहले से ही मितव्ययिता अपनाए ताकि सूद पर ऋण लेने की नौबत न आए, क्योंकि उससे सूद मूल धन से भी अधिक हो जाता है। अभी कल ही एक व्यक्ति का पत्र आया था कि वह एक हजार रुपये दे चुका है, फिर भी पाँच-छः सौ रुपये बाकी हैं। फिर एक समस्या यह भी है कि अदालतें भी उसके पक्ष में डिग्री जारी कर देती हैं। किन्तु इसमें अदालतों का क्या दोष? जब उसका स्वीकार मौजूद है तो उसका अर्थ यही है कि वह सूद देने पर सहमत है, इसलिए वहाँ से डिग्री जारी हो जाती है। इससे अच्छा यह था कि मुसलमान आपस में सहमति करते और कोई कोष एकत्र करके उसे व्यापारिक रूप से बढ़ाते, ताकि किसी भाई को सूद पर ऋण लेने की आवश्यकता न पड़ती। बल्कि उसी सभा से प्रत्येक जरूरतमंद व्यक्ति अपनी आवश्यकता पूरी कर लेता और निर्धारित समय पर उसे वापस कर देता।

(बदर, जिल्द नम्बर 7, दिनांक 6 फ़रवरी 1908 ई., पृष्ठ 6)

(बिहवाला तफ़्सीर हज़रत मसीह मौऊद अलैहिस्सलाम, जिल्द नम्बर 1, पृष्ठ 390-389)

★ ★ ★

पृष्ठ 1 का शेष

रहता है कि उसने फ़लाँ समय से पहले क़र्ज़ अदा करना है और वह उसकी अदायगी के लिए प्रयास करता रहता है। दूसरा फ़ायदा यह है कि क़र्ज़ लेने वाला एक निश्चित समय तक निश्चिंत रहता है और उसे यह डर नहीं रहता कि न जाने क़र्ज़ देने वाला कब पैसे का तक़ाज़ा कर दे।

इस प्रकार इसमें देने वाले का भी फ़ायदा है और लेने वाले का भी। देने वाले का फ़ायदा यह है कि यदि एक महीने का वादा है तो वह एक महीने बाद जाकर माँगेगा, बार-बार पूछने की ज़रूरत नहीं पड़ेगी। और लेने वाले का फ़ायदा यह है कि जब वह क़र्ज़ ले रहा होगा तो सोचेगा कि जिस समय में मैं अदायगी का वादा कर रहा हूँ, क्या मैं उस समय में वास्तव में चुका भी सकूँगा या नहीं।

इसके अलावा यह शर्त इसलिए भी लगाई गई है कि कुछ कमज़ोर लोग यह आपत्ति कर सकते थे कि हम सूद इसलिए देते हैं कि क़र्ज़ लेने वाले को उसकी अदायगी की फ़िक्र रहती है और वह जल्दी छुटकारा पाने की कोशिश करता है, लेकिन अगर सूद न लिया जाए तो उसे अदायगी का एहसास नहीं रहता। इस शंका को दूर करने के लिए फ़रमाया गया कि जब तुम एक-दूसरे को क़र्ज़ दो तो समझौता लिखवा लिया करो कि फ़लाँ समय के अंदर-अंदर अदायगी कर दी जाएगी, ताकि तुम्हारा पैसा भी सुरक्षित रहे और दूसरे व्यक्ति को भी अपनी ज़िम्मेदारी का एहसास रहे।

लेकिन इसका यह मतलब नहीं कि अगर क़र्ज़ निश्चित समय (अजल-ए-मुसम्मा) के साथ हो तो ही लिखो और अगर निश्चित समय न हो तो न लिखो। क्योंकि जब कोई व्यक्ति किसी को क़र्ज़ देता है तो वह किसी न किसी निश्चित समय के लिए ही देता है, चाहे वह अवधि थोड़ी हो या अधिक। उसके बाद वह उसे वापस लेने का हक़दार होता है। ऐसा कभी नहीं हुआ कि किसी ने दूसरे को क़र्ज़ दिया हो और फिर उसके वापस लेने का कोई एहसास ही न हो।

अगर किसी को हिबा या मदद के तौर पर राशि दी जाए तो वह अलग बात है, लेकिन जिस चीज़ पर "क़र्ज़" का शब्द लागू होता है वह निश्चित समय के साथ ही होती है, चाहे वह समय ज़बान से तय किया गया हो या न किया गया हो। हाँ, अगर बहुत ही थोड़े समय के लिए, जैसे एक-दो घंटे या एक-दो दिन के लिए क़र्ज़ हो तो ऐसी स्थिति में न लिखना कोई शरई गुनाह नहीं।

अफ़सोस की बात है कि मुसलमान इन दोनों बातों की परवाह नहीं करते। न तो क़र्ज़ देते समय दोस्ती और मोहब्बत के बावजूद समय निश्चित करते हैं, बल्कि कह देते हैं कि जब मन करे दे देना, और न ही उसे लिखित रूप में लाते हैं, जिसके कारण बाद में बहुत सी ख़राबियाँ पैदा हो जाती हैं और उन्हें कड़वे परिणाम भुगतने पड़ते हैं।

"وَلْيَكْتُبْ بَيْنَكُمْ كَاتِبٌ بِالْعَدْلِ" — तीसरा आदेश यह दिया कि लिखने वाला कोई और व्यक्ति हो। क़र्ज़ देने वाला या लेने वाला स्वयं न लिखे, बल्कि कोई निष्पक्ष व्यक्ति हो जो न्याय और इंसाफ़ के साथ लिखे, अर्थात अपनी ओर से उस समझौते में कोई बात न जोड़े, बल्कि वही लिखे जो उसे लिखने के लिए कहा गया है।

फिर लेखक को आदेश दिया गया कि वह लिखने से इनकार न करे, बल्कि जैसे अल्लाह तआला ने उसे सिखाया है वैसे ही उसे लिखना चाहिए। या इसका अर्थ यह भी हो सकता है कि क्योंकि अल्लाह तआला ने उसे लिखना सिखाया है, इसलिए उसे लिखने से इनकार नहीं करना चाहिए। "कमा अल्लमाहु" के दोनों अर्थ हो सकते हैं—यह भी कि जितनी योग्यता उसे प्राप्त है उसके अनुसार लिखे, और यह भी कि चूँकि अल्लाह ने उस पर कृपा की है, इसलिए उसे दूसरों को लाभ पहुँचाना चाहिए और लिखने से इनकार नहीं करना चाहिए, ताकि ज़रूरतमंद व्यक्ति क़र्ज़ न मिलने के कारण परेशान न हो।

"وَلْيُمْلِلِ الَّذِيْ عَلَيْهِ الْحَقُّ" — चौथा आदेश यह दिया कि जिस पर हक़ (देयता) है वही लिखवाए। अर्थात पैसा लेने वाले को स्वयं दस्तावेज़ लिखवाना चाहिए। इसमें बहुत बड़ी हिकमत है। देखने में तो यह चाहिए था कि पैसा देने वाला लिखवाए, लेकिन ऐसा आदेश नहीं दिया गया। इसकी ज़िम्मेदारी क़र्ज़ लेने वाले पर रखी गई, क्योंकि जब उसे पैसा मिल जाता है तो वह खुशी में लापरवाह हो सकता है और बाद में कह सकता है कि मुझे ध्यान ही नहीं था कि क्या लिखा जा रहा है। इसलिए उसे स्वयं लिखवाने का आदेश दिया गया, ताकि उसकी अपनी स्वीकारोक्ति मौजूद रहे।

दूसरी वजह यह है कि दस्तावेज़ उस व्यक्ति के पास रहेगा जिसने पैसा दिया है, इसलिए उसे अवसर रहेगा कि वह जाँच ले कि कहीं कोई गलती तो नहीं हुई। लेकिन लेने वाले के पास दस्तावेज़ नहीं रहेगा, इसलिए यदि उस समय उसकी पूरी ध्यान नहीं रहा तो उसे नुकसान का खतरा हो सकता है।

"وَلَا يَبْخَسْ مِنْهُ شَيْئًا" — पाँचवाँ आदेश यह दिया कि लिखवाते समय उसमें से कोई चीज़ कम न की जाए, बल्कि उसे बिल्कुल सही-सही लिखवाया जाए। यहाँ यह प्रश्न हो सकता है कि क़र्ज़ में तो कमी नहीं होती क्योंकि दोनों पक्ष सामने होते हैं, फिर यह आदेश क्यों दिया गया?

इसका उत्तर यह है कि कुछ क़र्ज़ ऐसे जटिल रूप में होते हैं जिनमें लिखते समय ऐसे पेचीदा शब्द इस्तेमाल किए जाते हैं जिनका परिणाम अंत में कमी के रूप में निकलता है, विशेष रूप से लंबे समय वाले और विभिन्न प्रकार के क़र्ज़ों में। ऐसे मामलों में अक्सर चालाकियाँ और धोखे किए जाते हैं, जैसे सरकारों के क़र्ज़। इसलिए आदेश दिया गया कि लिखवाने में पूरी ईमानदारी से काम लो और एक भी हिस्सा कम करने की कोशिश न करो।

(तफ़्सीर कबीर, जिल्द 1, तफ़्सीर सूरह अल-बक़रा, आयत 283)

★ ★ ★

हज़रत मुहम्मद मुस्तफ़ा सल्लल्लाहो अलैहि व सल्लम का पवित्र जीवन

(हज़रत मिर्ज़ा बशीरुद्दीन महमूद अहमद[रज़ि.] जमाअत अहमदिया के द्वितीय ख़लीफ़ा)

मुहाजिरों, अन्सार तथा यहूदियों के मध्य परस्पर समझौता

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहो अलैहि वसल्लम ने मुसलमानों को परस्पर भाई-भाई बनाने के अतिरिक्त समस्त मदीना-वासियों के मध्य एक समझौता कराया आप ने यहूदियों और अरबों के सरदारों को एकत्र किया और फ़रमाया— पहले यहां दो गिरोह थे परन्तु अब तीन हो गए हैं अर्थात् पहले तो यहां केवल यहूदी तथा मदीना के अरब लोग रहते थे परन्तु अब यहूदी, मदीना के अरब और मक्का के प्रवासी तीन गिरोह हो गए हैं। इसलिए मैं चाहता हूँ कि परस्पर एक संधि पत्र तैयार किया जाए। अस्तु समझौते के अनुसार एक सन्धि-पत्र लिखा गया। जिसके शब्द ये हैं —

"मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहो अलैहि वसल्लम, मोमिनों तथा उन समस्त लोगों— जो उन में प्रसन्नतापूर्वक सम्मिलित हो जाएँ— के मध्य समझौता-पत्र

☆मुहाजिरों (प्रवासियों) से यदि कोई क़त्ल हो जाए तो वे उस क़त्ल के स्वयं उत्तरदायी होंगे तथा अपने बन्दियों को स्वयं छुड़ाएंगे तथा मदीना के विभिन्न मुसलमान क़बीले भी इसी प्रकार इन बातों में अपने क़बीलों के उत्तरदायी होंगे, ☆जो व्यक्ति उपद्रव फैलाए या शत्रुता को जन्म दे और व्यवस्था भंग करे, तो समझौता करने वाले समस्त लोग उसके विरुद्ध खड़े हो जाएंगे चाहे वह उनका अपना बेटा ही क्यों न हो। ☆यदि कोई काफ़िर मुसलमान के हाथ से मारा जाए तो उसके मुसलमान परिजन मुसलमान से बदला नहीं लेंगे और न किसी मुसलमान के मुक़ाबले में ऐसे काफ़िरों की सहायता करेंगे। ☆यदि कोई यहूदी हमारे साथ मिल जाए तो हम सब उसकी सहायता करेंगे। यहूदियों को इस प्रकार का कष्ट नहीं दिया जाएगा, न उनके किसी विरोधी शत्रु की सहायता की जाएगी, ☆कोई ग़ैर मोमिन मक्का के लोगों को अपने घर में शरण नहीं देगा, न उनकी जायदाद अपने पास बतौर धरोहर के रखेगा और न काफ़िरों तथा मोमिनों की लड़ाई में किसी प्रकार का हस्तक्षेप करेगा। ☆यदि कोई व्यक्ति किसी मुसलमान को अनुचित तौर पर मार दे तो समस्त मुसलमान मिलकर उसके विरुद्ध कार्यवाही का प्रयास करेंगे। ☆यदि एक द्वैतवादी (मुश्रिक) शत्रु मदीना पर आक्रमण करे तो यहूदी मुसलमान का साथ देंगे तथा अपने निश्चित भाग के अनुसार व्यय वहन करेंगे। ☆यहूदी क़बीले जो मदीना के विभिन्न क़बीलों के साथ समझौता कर चुके हैं उनके अधिकार मुसलमानों के अधिकारों के समान होंगे। ☆यहूदी अपने धर्म पर बने रहेंगे और मुसलमान अपने धर्म पर। ☆जो अधिकार यहूदियों को प्राप्त होंगे वही उन के अनुयायियों को भी प्राप्त होंगे। ☆मदीना के लोगों में से कोई व्यक्ति मुहम्मद रसूलुल्लाह (स.अ.व.) की आज्ञा के बिना कोई लड़ाई आरम्भ नहीं कर सकेगा परन्तु इस शर्त के अन्तर्गत कोई व्यक्ति उसके बदला से वंचित नहीं किया जाएगा। ☆यहूदी अपने संगठन में अपने ख़र्चे स्वयं वहन करेंगे और मुसलमान अपने ख़र्चे स्वयं वहन करेंगे परन्तु लड़ाई की अवस्था में वे दोनों मिलकर कार्य करेंगे। ☆मदीना उन समस्त लोगों के लिए जो इस समझौता में सम्मिलित होते हैं एक प्रतिष्ठित स्थान होगा। ☆जो अनजान लोग शहर के लोगों की सहायता में आ जाएँ उनके साथ भी वही व्यवहार होगा जो शहर के मूल निवासियों के साथ होगा परन्तु मदीना के लोगों को यह अनुमति न होगी कि किसी स्त्री को उसके परिजनों की सहमति के विपरीत अपने घरों में रखें। ☆झगड़े और फ़साद निर्णय के लिए ख़ुदा और उसके रसूल के पास प्रस्तुत किए जाएँगे। ☆मक्का वालों तथा उसके मित्र क़बीलों के साथ इस समझौता में सम्मिलित होने वाले कोई समझौता नहीं करेंगे क्योंकि इस समझौता में सम्मिलित लोग मदीना के शत्रुओं के विरुद्ध इस समझौता द्वारा सहमत हो चुके हैं। ☆जिस प्रकार युद्ध पृथक तौर पर नहीं किया जा सकेगा उसी प्रकार संधि भी पृथक तौर पर नहीं की जा सकेगी। परन्तु किसी को विवश नहीं किया जाएगा कि वह लड़ाई में सम्मिलित हो। ☆हाँ यदि कोई व्यक्ति अत्याचार का कोई कार्य करेगा तो वह दण्डनीय होगा। ख़ुदा निश्चय ही सदाचारी और धर्मनिष्ठों का रक्षक है और मुहम्मद (स.अ.व.) ख़ुदा के रसूल हैं।[1]

यह उस समझौते का सारांश है। इस समझौते में बार-बार इस बात पर बल दिया गया था कि ईमानदारी और जीवन की स्पष्टता को हाथ से नहीं जाने दिया जाएगा तथा अत्याचारी अपने अत्याचार का स्वयं उत्तरदायी होगा। इस समझौते से स्पष्ट है कि रसूलुल्लाह (स.अ.व.) की ओर से यह निर्णय हो चुका था कि यहूदियों तथा मदीना के उन लोगों के साथ जो इस्लाम में सम्मिलित न हों, प्रेम और सहानुभूति का व्यवहार किया जाएगा तथा उन्हें भाइयों की तरह रखा जाएगा। परन्तु बाद में यहूदियों के साथ जितने भी झगड़े पैदा हुए उसके उत्तरदायी सर्वथा यहूदी ही थे।

मक्का वालों की ओर से नए सिरे से उपद्रवों का प्रारम्भ

जैसा कि वर्णन किया जा चुका है दो-तीन माह के पश्चात् जब मक्का वालों की परेशानी दूर हुई तो उन्होंने इस्लाम के विरुद्ध पुनः एक नया मोर्चा संगठित किया। अतः उन्हीं दिनों में मदीने के एक रईस 'सअद बिन मआज़[रज़ि.] जो औस क़बीले के सरदार थे का'बा का तवाफ़ (परिक्रमा) करने के लिए मक्का गए तो अबूजहल ने उन्हें देख कर क्रुद्ध होकर कहा— क्या तुम लोग यह सोचते हो कि उस धर्म से विमुख हुए (मुहम्मद रसूलुल्लाह स.अ.व.) को शरण देने के पश्चात् तुम लोग शान्तिपूर्वक काबे का तवाफ़ कर सकोगे और तुम यह सोचते हो कि तुम उसकी सुरक्षा और सहायता की शक्ति रखते हो। ख़ुदा की सौगंध यदि इस समय तुम्हारे साथ अबू सफ़वान न होता तो तू अपने घर वालों के पास बच कर न जा सकता। सअद बिन मआज़[रज़ि.] ने कहा— ख़ुदा की क़सम यदि तुम ने हमें का'बा से रोका तो स्मरण रखो फिर तुम्हें भी तुम्हारे शाम के मार्ग पर अमन प्राप्त नहीं हो सकेगा। उन्हीं दिनों वलीद बिन मुग़ीरह मक्का का एक बहुत बड़ा रईस बीमार हुआ और उसने महसूस किया कि उसकी मृत्यु निकट है। एक दिन मक्का के बड़े-बड़े धनवान लोग उसके पास बैठे थे, वह अचानक रोने लग गया। मक्का के ये लोग आश्चर्यचकित हुए तथा उस से पूछा कि आप रोते क्यों है? वलीद ने कहा— क्या तुम समझते हो कि मैं मृत्यु के भय से रोता हूँ। ख़ुदा की क़सम ऐसा कदापि नहीं। मुझे तो यह चिन्ता है कि कहीं ऐसा न हो कि मुहम्मद (स.अ.व.) का धर्म फैल जाए और मक्का भी उसके अधिकार में चला जाए। अबू सुफ़ियान ने उत्तर में कहा— इस बात की चिन्ता न करो। जब तक हम जीवित हैं ऐसा नहीं होगा और हम इस बात के लिए वचनबद्ध हैं। इन समस्त घटनाओं से सिद्ध होता है कि मक्का के लोगों के अत्याचारों में जो अन्तराल हुआ था वह अस्थायी था। जाति को पुनः उकसाया जा रहा था, मरने वाले धनाढ्य लोग मृत्यु शैया पर भी मुहम्मद रसूलुल्लाह (स.अ.व.) का विरोध जारी रखने की क़समें ले रहे थे, मदीना के लोगों को मुहम्मद रसूलुल्लाह (स.अ.व.) के विरुद्ध लड़ाई पर तैयार किया जा रहा था और उनके इन्कार पर धमकियां दी जा रही थीं कि मक्का वाले और उनके मित्र क़बीले मदीना पर सैन्य आक्रमण करेंगे मदीना के पुरुषों को मार देंगे तथा स्त्रियों को बन्दी बना कर दासियां बना लेंगे।

हज़रत मुहम्मद रसूलुल्लाह (स.अ.व.) की सुरक्षात्मक योजनाएँ

ऐसी परिस्थितियों में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहो अलैहि वसल्लम पर मदीना की सुरक्षा-व्यवस्था का बड़ा भारी दायित्व आ पड़ा !! अतः आप ने अपने साथियों को छोटे-छोटे दलों के रूप में मक्का के आस-पास भिजवाना आरम्भ किया ताकि आपको मक्का वालों की गतिविधियों का ज्ञान होता रहे। कई बार इन लोगों का मक्का के यात्री-दलों से या मक्का के कुछ समूहों से आमना-समना भी हो जाता और एक-दूसरे को देख लेने के पश्चात् लड़ाई तक भी नौबत पहुँच जाती। ईसाई लेखक लिखते हैं कि यह मुहम्मद रसूलुल्लाह की ओर से छेड़-छाड़ थी। क्या मक्का में मुसलमानों पर तेरह वर्ष तक अत्याचार किया गया वह मदीना के लोगों को मुसलमानों के विरुद्ध खड़ा करने का जो प्रयास किया गया और फिर मदीना पर आक्रमण करने की जो धमकियां दी गईं, उन घटनाओं की उपस्थिति में आपका सतर्क रहने के लिए दलों का भेजना छेड़-छाड़ कहला सकता है? संसार का कौन सा क़ानून है जो मक्का के तेरह वर्षीय अत्याचारों के पश्चात् भी मुसलमानों और मक्का वालों में लड़ाई छेड़ने के लिए किसी 'अतिरिक्त' कारण की आवश्यकता समझता हो। आज पश्चिमी देश स्वयं को बहुत अधिक सभ्य समझते हैं। जो कुछ मक्का में हुआ क्या उनसे आधी घटनाओं पर भी कोई जाति लड़े तो कोई व्यक्ति उसे अपराधी ठहरा सकता है? क्या यदि कोई सरकार किसी अन्य देश के लोगों को एक समूह का वध करने या अपने देश से बहिष्कृत कर देने पर विवश करे तो उस समूह को यह अधिकार प्राप्त नहीं कि वह उस से युद्ध की घोषणा करे? अतः मदीना में इस्लामी राज्य की स्थापना के पश्चात् किसी नए कारण के उत्पन्न होने की आवश्यकता ही नहीं थी। मक्का के जीवन की घटनाएं मुसलमानों को पूर्ण अधिकार देती थीं कि वह मक्का वालों से युद्ध की घोषणा कर दें परन्तु मुहम्मद रसूलुल्लाह (स.अ.व.) ने ऐसा नहीं किया। उन्होंने धैर्य किया और केवल शत्रुओं की गतिविधियों का पता रखने की सीमा तक अपने प्रयास सीमित रखे, परन्तु जब मक्का वालों ने स्वयं मदीना के अरबों को मुसलमानों के विरुद्ध उत्तेजित किया, मुसलमानों को हज करने से रोक दिया तथा उन के उन व्यापारिक दलों ने जो व्यापार के लिए शाम में जाते थे अपने सीधे मार्ग को छोड़ कर मदीना के आस-पास के क़बीलों में से होकर गुज़रना और उन्हें मदीना वालों के विरुद्ध उकसाना आरम्भ किया तो मदीने की सुरक्षा के लिए मुसलमानों का भी कर्त्तव्य था कि वह उस लड़ाई की चुनौती को जो उन्हें मक्का वाले निरन्तर चौदह वर्ष से देते चले आ रहे थे स्वीकार कर लेते तो संसार के किसी व्यक्ति को हक़ नहीं, पहुँचता कि वह चुनौती स्वीकार करने पर आपत्ति जताए।

मदीना में इस्लामी शासन की नींव

नबी करीम (स.अ.व.) जहां बाह्य परिस्थितियों पर दृष्टि रखे हुए थे वहां मदीने के सुधार से भी असावधान नहीं थे। यह बताया जा चुका है कि मदीने के अधिकांश द्वैतवादी (मुश्रिक) शुद्ध हृदय से और कुछ छल-कपट के भाव के साथ मुसलमान हो चुके थे। इस लिए रसूलुल्लाह (स.अ.व.) ने उनमें इस्लामी शासन-प्रणाली की स्थापना आरम्भ की। प्रथम अरबों के नियमानुसार लोग लड़-झगड़ कर अपने अधिकारों का निर्णय स्वयं कर लिया करते थे। अब नियमानुसार क़ाज़ी (न्यायाधीश) नियुक्त किए गए जिन के निर्णय के बिना कोई व्यक्ति दूसरे से अपना स्वत्त्व प्राप्त नहीं कर सकता था। पहले मदीना के लोगों का ध्यान शिक्षा की ओर न था। अब इस बात का प्रबंध किया गया कि शिक्षित लोग अशिक्षित लोगों को शिक्षा देना आरम्भ करें। अत्याचार, अनीति और अन्याय रोक दिया गया। स्त्रियों के अधिकार निश्चित किए गए। समस्त धनवानों पर शरीअत के अनुसार कर निर्धारित किए गए जो निर्धनों पर व्यय किए जाते थे तथा शहर की सामान्य अवस्था के विकास के लिए भी उपयोग में लाए जाते थे, श्रमिक वर्ग के अधिकारों की रक्षा की गई, अनाथों के लिए शिक्षा का उचित प्रबन्ध किया गया, लेन-देन में लिखित प्रपत्र तथा समझौते की पाबन्दियां निर्धारित की गईं, दासों पर होने वाले क्रूर व्यवहारों को बलपूर्वक रोका जाने लगा, स्वच्छता और स्वास्थ्य-रक्षा के नियमों पर बल दिया जाने लगा, जन-गणना का आरम्भ किया गया, गलियों और सड़कों को विस्तृत करने के आदेश जारी किए गए, सड़कों की सफाई से संबंधित आदेश जारी किए गए। फलतः पारिवारिक तथा सामाजिक जीवन के समस्त सिद्धान्तों का सम्पादन किया गया और उन्हें क्रमानुसार जारी करने के उपाय किए गए तथा अरब लोग पहली बार व्यवस्थित और सभ्य समाज के नियमों से परिचित हुए।

इधर रसूले करीम (स.अ.व.) अरब के लिए ऐसा कानून प्रस्तुत कर रहे थे जो न केवल उस युग के लिए अपितु हमेशा के लिए ; और न केवल उन के लिए अपितु संसार की अन्य जातियों के लिए भी सम्मान, प्रतिष्ठा, अमन और उन्नति का प्रेरक था। उधर मक्का के लोग इस्लाम के विरुद्ध पूर्ण संसाधनों के साथ युद्ध की तैयारियों में व्यस्त थे, जिसका परिणाम बदर-युद्ध के रूप में प्रकट हुआ।

क़ुरैश के व्यापारिक दल का आगमन तथा बदर का युद्ध[1]

हिजरत (प्रवास) के तेरहवें माह में शाम से एक व्यापारी-दल अबू सुफ़ियान के नेतृत्व में आ रहा था कि उसकी सुरक्षा के बहाने मक्का वालों ने एक शक्तिशाली सेना मदीने की ओर ले जाने का निर्णय किया। रसूले करीम (स.अ.व.) को भी इसकी सूचना प्राप्त हो गई तथा ख़ुदा तआला की ओर से आप पर वह्यी हुई। अब समय आ गया है कि शत्रु के अत्याचार का उत्तर उसी के शस्त्र से दिया जाए। अतः आप मदीना के थोड़े से साथियों को लेकर निकले। आप जब मदीना से निकले हैं तो उस समय तक यह स्पष्ट न था कि क्या मुक़ाबला व्यापारी दल से होगा या सुनिश्चित सेना से। इसलिए आप के साथ मदीना से तीन सौ लोग निकले। यह नहीं समझना चाहिए कि व्यापारी दल से अभिप्राय माल से लदे हुए ऊँट थे अपितु मक्का वाले उन दलों के साथ एक शक्तिशाली सैनिक दल भिजवाया करते थे क्योंकि वे उन दलों के माध्यम से मुसलमानों को आतंकित भी करना चाहते थे। अतः इस व्यापारी दल से पूर्व इतिहास में दो दलों की चर्चा आती है कि उनमें से एक की सुरक्षा पर दो सौ सैनिक नियुक्त थे तथा दूसरे की सुरक्षा पर तीन सौ सैनिक नियुक्त थे। अतः इन परिस्थितियों में ईसाई लेखकों का यह लिखना कि तीन सौ सिपाही लेकर आप मक्का के एक शस्त्रविहीन क़ाफ़िले को लूटने के लिए निकले थे मात्र धोखा देना है। यह क़ाफ़िला चूंकि बहुत बड़ा था इसलिए पहले क़ाफ़िलों के सुरक्षा-दलों की संख्या को देखते हुए यह समझना चाहिए कि उसके साथ चार-पाँच सौ सवार अवश्य होंगे। इतने विशाल सुरक्षा-दल के साथ मुक़ाबला करने के लिए यदि इस्लामी सेना जो केवल तीन सौ लोगों पर आधारित थी, जिनके साथ पूरा समान भी न था निकली तो उसे लूट का नाम देना मात्र पक्षपात, द्वेष, हठ और अन्याय ही की संज्ञा दी जा सकती है। यदि केवल इस क़ाफ़िले का प्रश्न होता तब भी उस से लड़ाई युद्ध ही कहलाता और युद्ध भी आत्मरक्षात्मक युद्ध क्योंकि मदीने की सेना दुर्बल थी और केवल इसी उपद्रव को दूर करने के लिए निकली थी जिस से आस-पास के क़बीलों को उपद्रव करने पर

उकसा कर मक्का के क़ाफ़िले फ़साद और दंगों की नींव रख रहे थे, परन्तु जैसा कि क़ुर्आन करीम से विदित होता है ख़ुदा की इच्छा भी थी कि क़ाफ़िले से नहीं अपितु मक्का का मूल सेना से मुकाबला हो और केवल मुसलमानों की वफ़ादारी और उन के ईमान को दर्शाने के लिए पहले से इस बात को प्रकट न होने दिया गया। जब मुसलमान पूर्ण तैयारी के बिना मदीना से निकल खड़े हुए तो कुछ दूर जाकर रसूले करीम (स.अ.व.) ने सहाबा[रज़ि.] पर स्पष्ट किया कि ख़ुदा की यही इच्छा है कि मक्का की असल सेना से ही सामना हो। सेना के संबंध में मक्का से जो सूचनाएं आ चुकी थीं उन से विदित होता था कि सेना की संख्या एक हज़ार से अधिक है और फिर वे सभी प्रशिक्षित अनुभवी सैनिक थे। रसूले करीम (स.अ.व.) के साथ आने वाले लोग मात्र तीन सौ तेरह (313) थे तथा उनमें से बहुत से ऐसे थे जो युद्ध कला से अपरिचित थे फिर उनके पास युद्ध सामग्री भी पूरी न थी। अधिकांश या तो पैदल थे या ऊँटों पर सवार थे, घोड़ा केवल एक था। इस छोटी सी सेना के साथ जो साधन विहीन भी थी, एक अनुभवी शत्रु का मुकाबला जो संख्या में उनसे तीन गुना से भी अधिक था अत्यन्त ख़तरनाक बात थी। इसलिए आप ने न चाहा कि कोई व्यक्ति उसकी इच्छा के विरुद्ध युद्ध के लिए विवश किया जाए। अतः आप ने अपने साथियों के समक्ष यह प्रश्न प्रस्तुत किया कि अब क़ाफ़िले का कोई प्रश्न नहीं केवल सेना का ही मुक़ाबला किया जा सकता है और यह कि वे (साथी) इस संबंध में आप को परामर्श दें। एक के पश्चात् एक मुहाजिर (प्रवासी) खड़ा हुआ और उसने कहा—

पृष्ठ 2 का शेष शेष ..

आपसी संबंध खराब होंगे। तो याद रखें कि यदि संबंध खराब होते हैं, तो वे तब होते हैं जब कुरआन करीम के आदेश की अवहेलना की जाती है, न कि कुरआन पर अमल करने से।

कई बार लोग कहते हैं कि यह छोटी राशि है, इसे क्या लिखना, हमें तो शर्म आती है कि इतनी छोटी राशि के बारे में लिखें जबकि इतना घनिष्ठ संबंध है। या फिर कोई वस्तु उपयोग के लिए ली जाती है, तो उसके बारे में लिखने में हिचकिचाते हैं, जैसे विवाह आदि में एक-दूसरे की वस्तुएँ उपयोग के लिए ली जाती हैं। वे भी इसी श्रेणी में आती हैं, उन्हें भी लिख लेना चाहिए क्योंकि उनमें भी कई बार बदगुमानियाँ पैदा हो जाती हैं। बाद की बदगुमानियों से बचने का सबसे अच्छा तरीका यही है कि छोटी-सी लिखित व्यवस्था कर ली जाए।

अल्लाह तआला का आदेश है कि लेन-देन चाहे छोटा हो या बड़ा, झगड़ों से बचने के लिए उसे लिखो। जैसा कि फ़रमाया:

{وَلَا تَسْـَٔمُوْٓا اَنْ تَكْتُبُوْهُ صَغِيْرًا اَوْ كَبِيْرًا اِلٰٓى اَجَلِهٖ}

अर्थात लेन-देन चाहे छोटा हो या बड़ा, उसकी निर्धारित अवधि तक उसे लिखते रहो, और उसके विवरण भी लिखो। और इससे ऊबना नहीं चाहिए और इसे मामूली बात नहीं समझना चाहिए।

क्योंकि ऊबने का अर्थ यह है कि शैतान कभी भी आपके अंदर बदगुमानियाँ पैदा कर सकता है। और जो आप बाहरी तौर पर ऊँचे हौसले का प्रदर्शन कर रहे होते हैं, वह एक समय ऐसा ला सकता है कि आप अच्छे आचरण के बजाय निम्न आचरण भी दिखाने लगें। और ऐसा अक्सर होता है। ये केवल कल्पनाएँ नहीं हैं, बल्कि व्यवहार में ऐसे मामले आते हैं। कई जगह ऐसे लेन-देन के मामलों में लोग अदालतों, न्यायिक विभागों, और सरकारी मामलों में मुकदमों तक पहुँच जाते हैं। वही लोग जो कभी एक-दूसरे के साथ बैठते थे, खाते-पीते थे, गहरे मित्र थे, वे एक-दूसरे के जान के दुश्मन बन जाते हैं, और अदालतों में एक-दूसरे के खिलाफ झूठी गवाही तक खोजी जाती है। यह सब अल्लाह तआला के आदेशों पर अमल न करने का परिणाम है।

फिर अल्लाह तआला, जो अपनी मख़लूक के स्वभाव को जानता है, ने यह भी बताया कि यह लिखित लेन-देन कैसे किया जाए और कौन लिखवाए। तो लिखवाने की जिम्मेदारी उस पर डाल दी गई है जिसके ऊपर हक है, जैसा कि फ़रमाया:

{وَلْيُمْلِلِ الَّذِيْ عَلَيْهِ الْحَقُّ وَلْيَتَّقِ اللّٰهَ رَبَّهٗ وَلَا يَبْخَسْ مِنْهُ شَيْـًٔا}

अर्थात जिस पर हक (ऋण) है वही लिखवाए, और वह अपने रब अल्लाह से डरता रहे और उसमें से कुछ भी कम न करे।

इसका अर्थ यह है कि जिसने ऋण लिया है वही लिखवाए, ताकि वह स्वयं स्पष्ट करे कि उसने कितना ऋण लिया है और उसकी शर्तें क्या हैं। जैसे यदि किस्तें हैं तो वह भी लिखी जाएँ, यदि समय निर्धारित है तो वह भी लिखा जाए। ताकि बाद में यह न कहा जा सके कि मेरे साथ अन्याय हुआ है या शर्तें बदल दी गईं। इस प्रकार यह व्यवस्था इसलिए की गई है कि ऋण लेने वाला स्वयं अपने शब्दों में पूरी बात लिखवाए।

यह भी केवल इस्लामी समाज में ही दिखाई देता है कि ऋण लेने वाला अपनी शर्तों पर ऋण लेता है, और ऋण देने वाले को यह निर्देश है कि वह सरलता दिखाए और उसे बहुत बड़ा पुण्य मिलेगा। आज दुनिया में आमतौर पर ऋण देने वाला अपनी शर्तें थोपता है, जबकि इस्लाम में ऋण लेने वाला अपनी शर्तें स्पष्ट करता है और ऋण देने वाले को उन्हें स्वीकार करने का आदेश दिया गया है और उसे बड़ा सवाब मिलता है।

फिर जब ऋण लेने वाला अपनी शर्तों पर ऋण ले लेता है तो वह उन शर्तों को पूरा करने का बाध्य भी होता है, और फिर उसे यह शिकायत नहीं रहती कि उसके साथ अन्याय हुआ है।

फिर यदि दोनों को लिखना न आता हो तो अपने परिचितों, रिश्तेदारों में से किसी ऐसे व्यक्ति को बुलाया जाए जो लिखना जानता हो। और लिखने वाले को भी आदेश दिया गया है कि वह न्याय के साथ लिखे, किसी रिश्तेदारी या पक्षपात में आकर किसी एक पक्ष की अनुचित सहायता न करे। और यह भी कि जब उसे लिखने के लिए बुलाया जाए तो वह इंकार न करे।

इस प्रकार पूरा समाज एक दूसरे से जुड़ जाता है। और यदि ऋण लेने वाला अशिक्षित हो या कमजोर समझ वाला हो तो उसकी कमजोरी का लाभ उठाकर कोई उसे नुकसान न पहुँचाए। इसलिए उसके किसी अभिभावक या निकट संबंधी को उसकी ओर से लिखवाने का आदेश दिया गया है।

और कभी-कभी नाबालिगों की संपत्ति के मामले में भी ऐसा होता है कि लोग उनका ऋण ले लेते हैं या उनकी मजबूरी का लाभ उठाकर उन्हें नुकसान पहुँचाते हैं, इसलिए इससे बचाना भी आवश्यक है।

फिर इतनी सावधानी के बाद यह भी बताया गया कि जब लिखित समझौता पूरा हो जाए तो उस पर गवाह बनाए जाएँ, जैसा कि फ़रमाया:

{وَاسْتَشْهِدُوْا شَهِيْدَيْنِ مِنْ رِّجَالِكُمْ}

अर्थात अपने पुरुषों में से दो गवाह बनाओ।

और यदि दो पुरुष न हों तो एक पुरुष के बदले दो महिलाएँ गवाह बन सकती हैं, ताकि यदि एक भूल जाए तो दूसरी उसे याद दिला दे।

इस प्रकार पूरी व्यवस्था स्पष्ट कर दी गई है और फिर यह भी चेतावनी दी गई है कि यदि तुम इस तरीके पर अमल नहीं करते तो तुम तक़वा से दूर हो जाओगे। यह निर्देश लिखने वाले, ऋण लेने वाले और गवाहों—सभी के लिए है।

और अंत में यह भी स्पष्ट कर दिया गया कि यदि कोई व्यक्ति धोखा देने या हक दबाने या सही तरीके से अदायगी न करने की कोशिश करे, या गवाहों पर दबाव डालकर अपनी बात कहलवाना चाहे, तो याद रखो कि लोगों को तो धोखा दिया जा सकता है, लेकिन अल्लाह तआला को धोखा नहीं दिया जा सकता। वह सब कुछ जानता है।

इसलिए हर व्यक्ति को हमेशा याद रखना चाहिए कि चाहे व्यापारिक लेन-देन हो या व्यक्तिगत लेन-देन, सिवाय नकद लेन-देन के—बाकी हर प्रकार के लेन-देन में, जहाँ भी समय का अंतर हो, वहाँ लिखित दस्तावेज होना चाहिए।

आजकल बहुत से व्यापार केवल मौखिक बातों पर चल रहे हैं और फिर उधार भी चलता रहता है। कई बार ईमानदार पक्ष की राशि दबा ली जाती है क्योंकि उनके पास बड़ा समूह या ताकत नहीं होती। इसलिए अहमदियों को चाहिए कि वे समय के चलन को छोड़कर अल्लाह के आदेश के अनुसार लेन-देन करें, इसी में सबकी भलाई है।

कई बार रोजमर्रा की जरूरतों या यात्रा के दौरान भी उधार ले लिया जाता है और बाद में टालमटोल की जाती है, जिससे रंजिशें पैदा हो जाती हैं। इसलिए ऐसे मामलों में भी लिखित व्यवस्था कर लेनी चाहिए।

और देने वाला व्यक्ति यह लिखवाए कि इतनी राशि, इस मुद्रा में, इस व्यक्ति को दी गई है। ऐसा करने से बहुत से झगड़े समाप्त हो जाते हैं और पैदा ही नहीं होते।

आज यहाँ कई मेहमान आए हुए हैं, उनसे भी यही कहना है कि वे अपने रिश्तेदारों और मित्रों से केवल अत्यंत आवश्यकता के समय ही किसी प्रकार का ऋण लें।

एक घटना याद आती है कि रब्वह के प्रारंभिक समय में जब बाज़ार से सामान लिया गया और पैसे पूरे नहीं थे, तो साथ वाले व्यक्ति ने भुगतान कर दिया। बाद में घर आकर उन्होंने वह धन लौटा दिया और कहा कि जब तक मैंने भुगतान नहीं किया था, तब तक यह सामान मेरा नहीं था, अब मैंने भुगतान कर दिया है, इसलिए अब यह मेरा है।

यदि ऐसे उदाहरण समाज में स्थापित हो जाएँ तो बहुत से झगड़े समाप्त हो सकते हैं।

अंत में, ऋण देने वाले को अपने ऋणी के साथ कैसा व्यवहार करना चाहिए, इसका भी उल्लेख है। यदि कोई तंगदस्त हो जाए तो उसे सुविधा और मोहलत देनी चाहिए, और यदि संभव हो तो ऋण माफ कर देना अधिक अच्छा है। अल्लाह तआला ऐसे लोगों को बड़ा इनाम देता है।

अल्लाह तआला हम सभी को अपने आदेशों पर चलने की तौफीक दे और हमारे समाज को हर प्रकार के झगड़ों और बुराइयों से सुरक्षित रखे।

★ ★ ★

EDITOR
SHAIKH MUJAHID AHMAD
Editor : +91-9915379255
e -mail : badarqadian@gmail.com
www.akhbarbadr.in

REGISTERED WITH THE REGISTRAR OF THE NEWSPAPERS FOR INDIA AT NO RN PUNHIN/2016/70553
Weekly BADAR Qadian
Qadian - 143516 Distt. Gurdaspur (Pb.) INDIA
POSTAL REG. No.GDP 45/ 2026-2028 Vol. 11 Thursday 21 May 2026 Issue No. 21

Act. MANAGER :
ATHAR AHMAD SHAMIM
Mobile : +91-9815639670
e -mail:managerbadrqnd@gmail.com
www.alislam.org/badr

सीरतुल-महदी

(लेखक: हज़रत मिर्ज़ा बशीर अहमद साहब एम.ए रज़ियल्लाहु अन्हु)

{44} बिस्मिल्ला हिर्रहमान निर्रहीम। मुझसे हज़रत वालिदा साहिबा ने बयान किया कि तुम्हारे दादा ने क़ादियान की जायदाद पर मालिकाना अधिकार बनाए रखने के लिए शुरू में बहुत से मुक़दमे किए और कश्मीर की नौकरी में तथा उसके बाद जितना भी पैसा जमा किया था, जो लगभग एक लाख था, वह सब इन मुक़दमों में खर्च कर दिया। वालिदा साहिबा ने बताया कि हज़रत साहिब कहा करते थे कि उस समय इतने रुपयों से सौ गुना बड़ी जायदाद खरीदी जा सकती थी। यह छोटा सेवक निवेदन करता है कि दादा साहिब का यह विचार था कि चाहे कुछ भी हो जाए, क़ादियान और क्षेत्र के पुराने पैतृक अधिकार हाथ से न जाएँ। हमने सुना है कि दादा साहिब कहा करते थे कि क़ादियान की संपत्ति मेरे लिए किसी राज्य से बेहतर है।

यह छोटा सेवक यह भी निवेदन करता है कि क़ादियान हमारे पूर्वजों द्वारा बसाया हुआ है, जो अंतिम बाबरी काल में भारत आए थे। क़ादियान और इसके चारों ओर कई मील तक के गाँव हमारे पूर्वजों के पास राज्य या जागीर के रूप में थे। रामगढ़ी सिखों के समय में हमारे परिवार को बहुत कष्ट सहने पड़े और भारी तबाही आई, लेकिन फिर राजा रणजीत सिंह के शासनकाल में हमारी जागीर का कुछ हिस्सा हमारे पूर्वजों को वापस मिल गया। लेकिन फिर अंग्रेजी शासन की शुरुआत में पिछले कई अधिकार छिन गए। और कई मुक़दमों के बाद, जिनमें दादा साहिब का बहुत धन खर्च हुआ, केवल क़ादियान और उसके भीतर शामिल दो गाँवों पर मालिकाना अधिकार तथा क़ादियान के निकट के तीन गाँवों पर ताल्लुकेदारी अधिकार हमारे परिवार के लिए स्वीकार किए गए। ये अधिकार अब तक कायम हैं।

हाँ, बीच में कुछ अपने ही रिश्तेदारों की मुक़दमेबाज़ी के कारण हमारे चाचा साहिब के समय में क़ादियान की जायदाद का बड़ा हिस्सा मिर्ज़ा आज़म बेग लाहौरी के परिवार के पास चला गया था और लगभग पैंतीस साल तक उसी परिवार में रहा, लेकिन अब हाल ही में वह हिस्सा भी अल्लाह के फ़ज़ल से हमें वापस मिल गया है। वालिदा साहिबा फ़रमाती थीं कि जब तुम्हारे चाचा के समय में क़ादियान की जायदाद का बड़ा हिस्सा मिर्ज़ा आज़म बेग को चला गया तो तुम्हारे चाचा को बहुत गहरा सदमा हुआ, जिससे वे बीमार हो गए और लगभग दो वर्ष बाद उसी बीमारी में उनका देहांत हो गया। लेकिन डिक्री (अदालती फ़ैसला) उनके विरुद्ध हो जाने के बावजूद उन्होंने जीवन में प्रतिपक्ष को कब्ज़ा नहीं दिया।

यह छोटा सेवक निवेदन करता है कि यह वही मुक़दमा और वही डिक्री है जिसका हज़रत मसीह मौऊद अलैहिस्सलाम ने अपनी पुस्तकों में उल्लेख किया है कि आपने अपने भाई को रोका था कि मुक़ाबला न करें और अधिकार स्वीकार कर लें, क्योंकि आपको अल्लाह की ओर से बताया गया था कि मुक़दमे का परिणाम विरुद्ध होगा। लेकिन हज़रत साहिब फ़रमाते थे कि भाई साहिब ने बहाना किया और नहीं माने। फिर जब डिक्री होने की सूचना आई, उस समय हज़रत साहिब अपने कक्ष में थे। चाचा साहिब बाहर से काँपते हुए डिक्री का कागज़ हाथ में लिए अंदर आए और हज़रत साहिब के सामने वह कागज़ रख दिया और कहा—

"ले, गुलाम अहमद, जो तू कहंदा सी, ओही हो गया ए।"

अर्थात ले, गुलाम अहमद, जो तुम कहते थे वही हो गया है। और फिर वे बेहोश होकर गिर पड़े। वालिदा साहिबा ने बताया कि चाचा साहिब के देहांत के बाद हज़रत साहिब ने मिर्ज़ा सुल्तान अहमद साहिब को बुलाकर फ़रमाया कि कब्ज़ा दे दो। अतः मिर्ज़ा सुल्तान अहमद साहिब ने डिक्री के अनुसार कब्ज़ा दे दिया और जायदाद का कुछ हिस्सा कम दाम पर बेचकर खर्च का पैसा भी अदा कर दिया।

(इस रिवायत में जो छोटा सेवक की ओर से यह वाक्य लिखा गया है कि "क़ादियान और उसके भीतर शामिल दो गाँवों पर मालिकाना अधिकार... स्वीकार किए गए" यह सही नहीं है, बल्कि लिखने में गलती से ये शब्द आ गए हैं, क्योंकि सही बात यह है कि क़ादियान के भीतर शामिल दो गाँव जिनका नाम क़ादिराबाद और अहमदाबाद है, वे दोनों दादा साहिब ने अंग्रेजी शासन की स्थापना के बाद बसाए थे। इसलिए "और उसके भीतर शामिल दो गाँव" वाले शब्द हटाए हुए समझे जाएँ।)

{45} बिस्मिल्ला हिर्रहमान निर्रहीम। यह छोटा सेवक निवेदन करता है कि हज़रत मसीह मौऊद अलैहिस्सलाम के पिता मिर्ज़ा गुलाम मुर्तज़ा साहिब का 1876 ईस्वी के जून महीने में, या हज़रत साहिब की एक लेखनी के अनुसार 20 अगस्त 1875 ईस्वी में देहांत हुआ। और आपके भाई मिर्ज़ा गुलाम क़ादिर साहिब का देहांत 1883 ईस्वी में हुआ। दादा साहिब की मृत्यु के समय आयु अस्सी वर्ष से अधिक थी, और चाचा साहिब की आयु लगभग पचपन वर्ष के आसपास थी।

हज़रत मसीह मौऊद की जन्म-तिथि के बारे में मतभेद है। स्वयं आपकी लेखनी में भी इस विषय पर भिन्न-भिन्न बातें मिलती हैं। वास्तव में वह सिखों का समय था और जन्मों का कोई रिकॉर्ड नहीं रखा जाता था। हज़रत मसीह मौऊद ने कुछ स्थानों पर 1839 या 1840 ईस्वी लिखा है, लेकिन आपकी ही अन्य लेखनी से इसका खंडन होता है। वास्तव में आपने अपनी आयु के बारे में अपने अनुमान को भी अनिश्चित बताया है। देखो: "ब्राहीन अहमदिया", भाग पाँच, पृष्ठ 193। (और सही तिथि 1836 ईस्वी ज्ञात हुई है)।

(और यह छोटा सेवक यह भी निवेदन करता है कि हज़रत साहिब की एक अन्य लेखनी से दादा साहिब की मृत्यु की तिथि जून 1874 ईस्वी सिद्ध होती है। लेकिन मेरी जाँच के अनुसार 1875 और 1874 दोनों गलत हैं, और जैसा कि सरकारी दस्तावेज़ों से पता चलता है सही तिथि 1876 ईस्वी है। लेकिन हज़रत साहिब को स्मरण नहीं रहा। अल्लाह ही बेहतर जानता है।)

{46} बिस्मिल्ला हिर्रहमान निर्रहीम। मुझसे हज़रत वालिदा साहिबा ने बयान किया कि हज़रत मसीह मौऊद पाँच भाई-बहन थे। सबसे बड़ी हज़रत साहिब की वह बहन थीं जिनका विवाह मिर्ज़ा गुलाम गौस होशियारपुरी के साथ हुआ था। हज़रत साहिब की यह बहन स्वप्न और कश्फ़ वाली थीं। उनका नाम मुराद बीबी था। उनसे छोटे मिर्ज़ा गुलाम क़ादिर साहिब थे। उनसे छोटा एक लड़का था जो बचपन में ही मृत्यु को प्राप्त हो गया। उससे छोटी हज़रत साहिब की वह बहन थीं जो आपके साथ जुड़वाँ पैदा हुई थीं और जल्दी ही उनका देहांत हो गया। उनका नाम जन्नत था। सबसे छोटे हज़रत मसीह मौऊद थे।

वालिदा साहिबा बताती थीं कि हज़रत साहिब फ़रमाते थे कि हमारी बड़ी बहन को एक बार किसी बुज़ुर्ग ने स्वप्न में एक तावीज़ दिया था। जब वे जागीं तो उनके हाथ में भोजपत्र पर लिखी हुई सूरह मरयम थी। (यह छोटा सेवक निवेदन करता है कि मैंने यह भोजपत्र देखा है, जो अब तक हमारी बड़ी भाभी साहिबा यानी मिर्ज़ा रशीद अहमद साहिब की माता के पास सुरक्षित है।)

शेष ..

★ ★ ★

Printed & Published by: Jameel Ahmed Nasir on behalf of Nigran Board of Badar. Name of Owner: Nigran Board of Badar. And printed at Fazle-Umar Printing Press. Harchowal Road, Qadian, Distt. Gurdaspur-143516, Punjab. And published at office of the Weekly Badar Mohallah - Ahmadiyya, Qadian Distt. Gsp-143516, Punjab. India. Editor:Shaikh Mujahid Ahmad